संत श्री आसारामजी आश्रम द्वारा प्रकाशित

ऋषि प्रसाद

हिन्दी

मूल्य : रु. ६/-
१ अप्रैल २०१०
वर्ष : १९ अंक : १०
(निरंतर अंक : २०८)
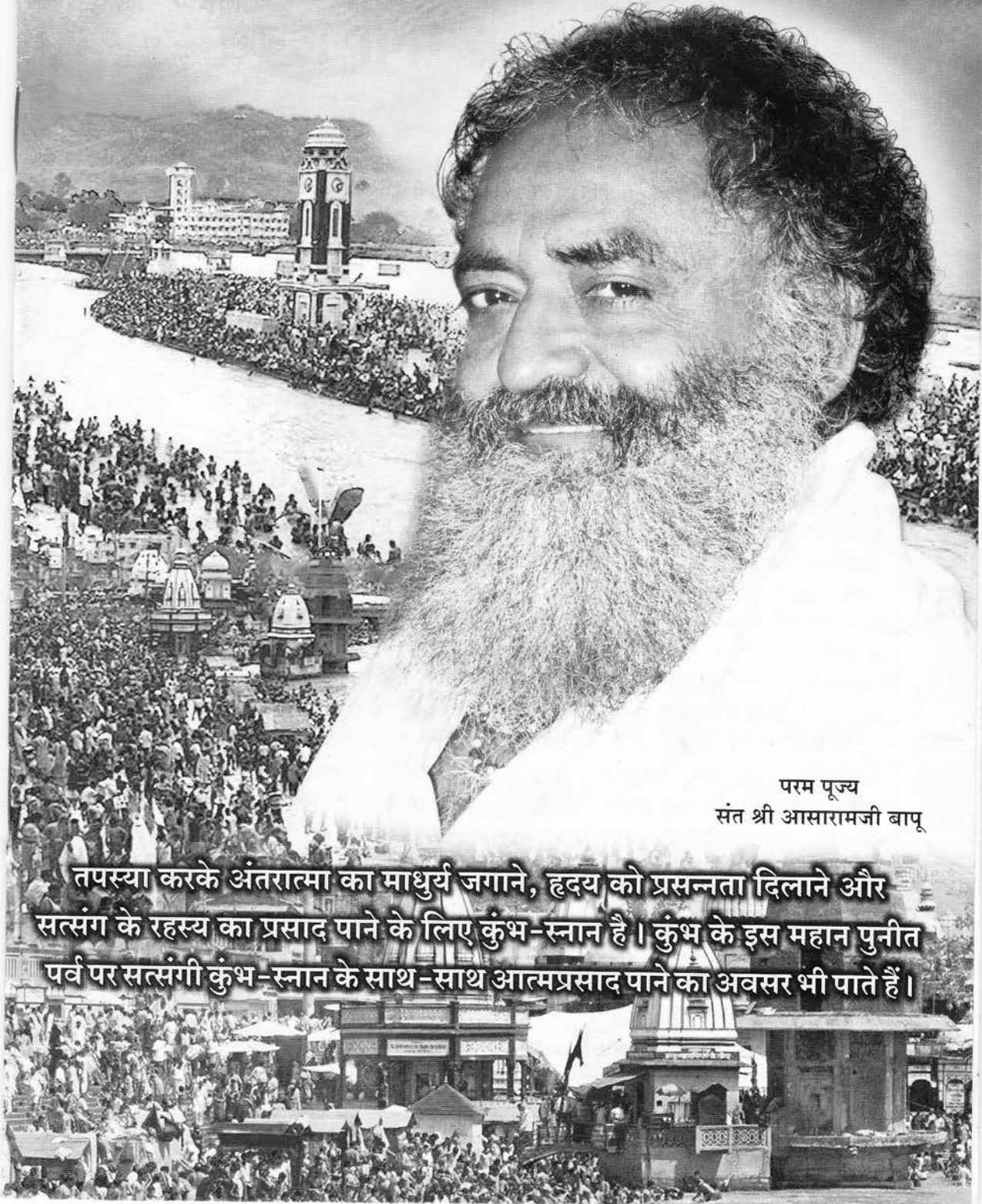
परम पूज्य
संत श्री आसारामजी बापू

तपस्या करके अंतरात्मा का माधुर्य जगाने, हृदय को प्रसन्नता दिलाने और सत्संग के रहस्य का प्रसाद पाने के लिए कुंभ-स्नान है। कुंभ के इस महान पुनीत पर्व पर सत्संगी कुंभ-स्नान के साथ-साथ आत्मप्रसाद पाने का अवसर भी पाते हैं।

विश्ववंदनीय ब्रह्मनिष्ठ परम पूज्य लोकसंत श्री आसारामजी बापू का अवतरण-दिवस

४ अप्रैल अर्थात् सेवा-दिवस

प्रातःस्मरणीय परम पूज्य संत श्री आसारामजी बापू ऐसे महापुरुष हैं जिन्होंने अपने शिष्यों को भक्तियोग और ज्ञानयोग के साथ-साथ कर्मयोग भी सिखाया है । पूज्यश्री का कहना है कि कर्म को करने की कला जान लो और उसे कर्मयोग बनाओ तो कर्म आपको बाँधनेवाले नहीं, भगवान से मिलानेवाले हो जायेंगे । भगवान ने हमें जो जानने, मानने और करने की शक्तियाँ दी हैं, उनका सदुपयोग करो । परहित में सत्कर्म करने से करने की शक्ति का सदुपयोग होता है ।

पूज्य बापूजी के इन्हीं वचनों का आदर करते हुए पूज्यश्री के शिष्यों द्वारा पूरे भारत में आपका अवतरण-दिवस हर वर्ष 'सेवा-दिवस' के रूप में मनाया जाता है । इस अवसर पर देश-विदेश में फैले आश्रम-संचालित १८,००० से अधिक बाल संस्कार केन्द्रों में विद्यार्थियों के सर्वांगीण विकास हेतु विभिन्न कार्यक्रम किये जाते हैं और भोजन-प्रसाद का वितरण किया जाता है । संत श्री आसारामजी आश्रम की सभी शाखाओं एवं आश्रम की १२७५ सेवा समितियों द्वारा अपने-अपने गाँवों, नगरों, शहरों में आध्यात्मिक जागृति हेतु हरिनाम संकीर्तन यात्राएँ निकाली जाती हैं । साथ ही झुग्गी-झोपड़ियों में गरीब-गुरबों को, बेसहारा विधवाओं को, अनाथालयों में अनाथों को, आदिवासी क्षेत्रों में अभावग्रस्तों को और अस्पतालों में मरीजों को अन्न, फल, औषधि, वस्त्र आदि जीवनोपयोगी वस्तुएँ तथा आर्थिक सहायता प्रदान कर कई-कई प्रकारों से इस 'संत अवतरण-दिवस' पर सेवा-सुवास महकायी जाती है । सत्साहित्य वितरण, बच्चों में नोटबुकें, पेन, पेंसिल आदि का वितरण, 'निःशुल्क चिकित्सा शिविरों' का आयोजन, व्यसनमुक्ति अभियान, 'युवा सेवा संघ' द्वारा युवाओं की उन्नति के लिए विभिन्न कार्यक्रमों का आयोजन भी किया जाता है ।
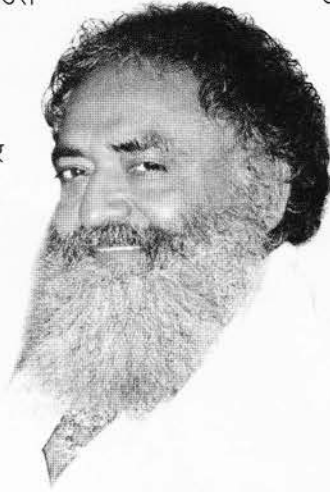
अवतरण-दिवस से शुरू करके पूरी गर्मियों में बस स्टैंड, रेलवे स्टेशन इत्यादि विभिन्न सार्वजनिक स्थलों पर निःशुल्क छाछ वितरण केन्द्र, जल प्याऊ, शीतल शरबत वितरण केन्द्र आदि भी चलाये जाते हैं । इस वर्ष सेवाकार्यों को और भी व्यापक रूप से किया जायेगा ।

इस प्रकार **'वासुदेवः सर्वम्'** अर्थात् 'यह पूरी सृष्टि परमात्मा का ही प्रकट स्वरूप है'- इस भाव से दीन-दुःखियों, जरूरतमंदों एवं सम्पूर्ण समाज की निःस्वार्थ भाव से सेवा करने से कर्म को कर्मयोग बनाने की कला जीवन में आ जाती है । साथ ही **'सर्वे भवन्तु सुखिनः...'** अर्थात् **'सबका मंगल, सबका भला'** की भावना जीवन में दृढ़ हो जाती है । अद्वैत वेदांत के सर्वोच्च आध्यात्मिक सिद्धांत को जीवन में प्रत्यक्ष उतारनेवाले ये सद्गुरु के निःस्वार्थ सेवक मानो समाज को संदेश दे रहे हैं : 'आओ, संसाररूपी कर्मभूमि को कर्मयोग का अवलम्बन लेकर नंदनवन बनायें ।'

पूज्य बापूजी के शिष्य एक ओर तो गुरुदेव से प्राप्त कर्मयोग की शिक्षा को व्यावहारिक रूप देकर जनसेवा अभियान चला रहे हैं तो दूसरी ओर ज्ञानयोग और भक्तियोग के पोषण हेतु इस दिन उत्सव का आयोजन कर सत्संग, ध्यान, भजन तथा संकीर्तन यात्राएँ आदि के द्वारा जीवन में ईश्वरीय आनंद, परमात्म-माधुर्य एवं भगवद्शांति को छलका रहे हैं ।

ब्रह्मनिष्ठ बापूजी के 'अवतरण-दिवस' की सभी श्रद्धालुओं को हार्दिक बधाइयाँ !

ऋषि प्रसाद

मासिक पत्रिका

हिन्दी, गुजराती, मराठी, उड़िया, तेलगू, कन्नड़, अंग्रेजी व सिंधी भाषाओं में प्रकाशित

वर्ष : १९ अंक : १०
भाषा : हिन्दी (निरंतर अंक : २०८)
१ अप्रैल २०१० मूल्य : रु. ६-००
वैशाख-अधिक वैशाख वि.सं. २०६७

स्वामी : संत श्री आसारामजी आश्रम
प्रकाशक और मुद्रक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
प्रकाशन स्थल : श्री योग वेदांत सेवा समिति, संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद -३८०००५ (गुजरात).
मुद्रण स्थल : विनय प्रिंटिंग प्रेस, "सुदर्शन", मिठाखली अंडरब्रिज के पास, नवरंगपुरा, अहमदाबाद- ३८०००९ (गुजरात).
सम्पादक : श्री कौशिकभाई पो. वाणी
सहसम्पादक : डॉ. प्रे. खो. मकवाणा, श्रीनिवास

सदस्यता शुल्क (डाक खर्च सहित)

भारत में

(१) वार्षिक : रु. ६०/-
(२) द्विवार्षिक : रु. १००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. २२५/-
(४) आजीवन : रु. ५००/-

नेपाल, भूटान व पाकिस्तान में (सभी भाषाएँ)

(१) वार्षिक : रु. ३००/-
(२) द्विवार्षिक : रु. ६००/-
(३) पंचवार्षिक : रु. १५००/-

अन्य देशों में

(१) वार्षिक : US $ 20
(२) द्विवार्षिक : US $ 40
(३) पंचवार्षिक : US $ 80

ऋषि प्रसाद (अंग्रेजी)	वार्षिक	द्विवार्षिक	पंचवार्षिक
भारत में	७०	१३५	३२५
अन्य देशों में	US $ 20	US $ 40	US $ 80

कृपया अपना सदस्यता शुल्क या अन्य किसी भी प्रकार की नकद राशि रजिस्टर्ड या साधारण डाक द्वारा न भेजा करें। इस माध्यम से कोई भी राशि गुम होने पर आश्रम की जिम्मेदारी नहीं रहेगी। अपनी राशि मनीऑर्डर या डिमांड ड्राफ्ट ('ऋषि प्रसाद' के नाम अहमदाबाद में देय) द्वारा ही भेजने की कृपा करें।

सम्पर्क पता

'ऋषि प्रसाद', संत श्री आसारामजी आश्रम, संत श्री आसारामजी बापू आश्रम मार्ग, साबरमती, अहमदाबाद-३८०००५ (गुजरात).
फोन नं. : (०७९) २७५०५०१०-११, ३९८७७७८८.
e-mail : ashramindia@ashram.org
web-site : www.ashram.org

इस अंक में...

साधना की जड़ : श्रद्धा

- पूज्य बापूजी

संसार से वैराग्य होना दुर्लभ है। वैराग्य हुआ तो कर्मकांड से मन उठना दुर्लभ है। कर्मकांड से मन उठ गया तो उपासना में मन लगना दुर्लभ है। मन उपासना में लग गया तो आत्मज्ञानी गुरु मिलना दुर्लभ है। आत्मज्ञानी गुरु भी मिल गये तो उनमें श्रद्धा होना और सदा के लिए टिकना दुर्लभ है। गुरु में श्रद्धा हो गयी तो भी आत्मज्ञान में प्रीति होना दुर्लभ है। आत्मज्ञान में प्रीति हो जाय लेकिन उसमें स्थिति करना दुर्लभ है। एक बार स्थिति हो गयी तो जीवन में दुःखी होना और फिर से माता के गर्भ में उलटा होकर लटकना तथा चौरासी के चक्कर में भटकना सदा के लिए समाप्त हो जाता है।

आत्मज्ञान के द्वारा ब्रह्माकार-वृत्ति बनाकर आवरण भंग करके जीवन्मुक्त पद में पहुँचना ही परम पुरुषार्थ है। इस पुरुषार्थ-भवन का प्रथम सोपान है श्रद्धा। तामसी श्रद्धावाला साधक कदम-कदम पर फरियाद करता है। ऐसे साधक में समर्पण नहीं होता; हाँ, समर्पण की भ्रांति हो सकती है। वह विरोध करेगा। राजसी श्रद्धावाला साधक हिलता रहता है, भाग जाता है, किनारे लग जाता है। सात्त्विक श्रद्धावाला साधक निराला होता है। परमात्मा और गुरु की ओर से चाहे जैसा व्यवहार हो, वह धन्यवाद से, अहोभाव से भरकर उनके हर विधान को मंगलमय समझके हृदय से स्वीकृति देता है।

प्रायः राजसी और तामसी श्रद्धावाले लोग अधिक होते हैं। तामसी श्रद्धावाला पग-पग पर इन्कार करेगा, विरोध करेगा, अपना अहं नहीं छोड़ेगा। वह अपने श्रद्धेय के साथ, अपने इष्ट के साथ, सद्गुरु के साथ विचारों से टकरायेगा। राजसी श्रद्धावाला जरा-सी परीक्षा हुई, थोड़ी-सी कुछ डाँट पड़ी तो किनारे हो जायेगा, भाग जायेगा। सात्त्विक श्रद्धावाला किसी भी परिस्थिति में डिगेगा नहीं, प्रतिक्रिया नहीं करेगा।

साधक में सात्त्विक श्रद्धा जग गयी तो उसका मन तत्त्वचिंतन में, आत्मविचार में लग जाता है। अन्यथा तो आत्मवेत्ता सद्गुरु मिलने के बाद भी आत्मज्ञान में मन लगना कठिन है। किसीको आत्म-साक्षात्कारी गुरु मिल जायें और उनमें श्रद्धा भी हो जाय तो यह जरूरी नहीं कि सब लोग आत्मज्ञान की तरफ चल ही पड़ेंगे। राजसी-तामसी श्रद्धावाले लोग आत्मज्ञान की तरफ नहीं चल सकते। वे तो अपनी इच्छा के अनुसार आत्मज्ञानी सद्गुरु से लाभ लेना चाहेंगे। इच्छा-निवृत्ति की ओर वे प्रवृत्त नहीं हो सकते। जो वास्तविक लाभ आत्मज्ञानी सद्गुरु उन्हें देना चाहते हैं, उससे वे वंचित रह जाते हैं। सात्त्विक श्रद्धावाले साधक को ही आत्मज्ञान का अधिकारी माना गया है और केवल वही आत्मज्ञान होने पर्यंत सद्गुरु में अचल श्रद्धा रख सकता है। वह प्रतिकूलता से भागता नहीं और प्रलोभनों में फँसता नहीं।

श्रद्धा निरंतर बनी रहना कठिन है। हमारी श्रद्धा रजो-तमोगुण से प्रभावित होती रहती है। इसलिए साधक कभी हिल जाता है और कभी विरोध भी करने लगता है। अतः जीवन में सत्त्वगुण बढ़ाना चाहिए। आहार की शुद्धि

से, चिंतन की शुद्धि से सत्त्वगुण की रक्षा की जाती है। अशुद्ध आहार, अशुद्ध विचारवाले व्यक्तियों के संग से बचना चाहिए। अपने जीवन के प्रति लापरवाही रखने से श्रद्धा का घटना-बढ़ना, टूटना-फूटना होता रहता है। फलतः साधक को साध्य तक पहुँचने में वर्षों लग जाते हैं। जीवन पूरा हो जाता है फिर भी आत्म-साक्षात्कार नहीं होता। साधक अगर पूरी सावधानी के साथ छः महीने ठीक प्रकार से साधना करे तो संसार और संसार की वस्तुएँ आकर्षित होने लगती हैं। सूक्ष्म जगत की कुंजियाँ हाथ लग जाती हैं। निरंतर सात्त्विक श्रद्धायुक्त साधना से साधक बहुत ऊपर उठ जाता है। रजो-तमोगुण से बचकर सत्त्वगुण के प्राधान्य से साधक आत्मज्ञानी सद्गुरु के ज्ञान में प्रवेश पा लेता है। फिर आत्मज्ञान का अभ्यास करने में परिश्रम नहीं पड़ता। अभ्यास सत्त्वगुण बढ़ाने के लिए, श्रद्धा को सात्त्विक बनाये रखने के लिए करना है। सत्त्वगुण बढ़ गया, सात्त्विक श्रद्धा स्थिर हो गयी तो आत्मविचार अपने-आप उत्पन्न होता है। ऐसी स्थिति प्राप्त करने के लिए साधक को जप, ध्यान, आत्मविचार और आत्मवेत्ता की सेवा में तत्पर रहना चाहिए, सात्त्विक श्रद्धा की सुरक्षा में सतर्क रहना चाहिए। इष्ट में, भगवान में, सद्गुरु में सात्त्विक श्रद्धा बनी रहे।

आत्मज्ञान तो कइयों को मिल जाता है लेकिन वे आत्मज्ञान में स्थिति नहीं करते। स्थिति करना चाहते हैं तो ब्रह्माकार वृत्ति उत्पन्न करने की खबर नहीं रखते। बढ़िया उपासना किये बिना भी किसीको सद्गुरु की कृपा से जल्दी आत्मज्ञान हो जाय तो भी विक्षेप रहेगा, मनोराज हो जाने की सम्भावना है। उच्चकोटि के साधक आत्म-साक्षात्कार के बाद भी ब्रह्माभ्यास में सावधानी से लगे रहते हैं। जिन महापुरुषों को परमात्मा का साक्षात्कार हो जाता है, वे भी ध्यान-भजन, शुद्धि-सात्त्विकता का ख्याल रखते हैं। हम लोग अगर लापरवाही कर दें तो अपने पुण्य और साधना के प्रभाव का नाश ही करते हैं।

जीवन में जितना उत्साह होगा, साधना में जितनी सतर्कता होगी, संयम में जितनी तत्परता होगी, जीवनदाता का मूल्य जितना अधिक समझेंगे उतनी हमारी आंतरयात्रा उच्चकोटि की होगी। ब्रह्माकार वृत्ति उत्पन्न होना भी ईश्वर की परम कृपा है। सात्त्विक श्रद्धा होगी, ईमानदारी से अपना अहं परमात्मा में समर्पित हो सकेगा तभी यह कार्य सम्पन्न होता है। संत तुलसीदासजी कहते हैं : **यह फल साधन ते न होई।**

ब्रह्मज्ञानरूपी फल साधन से प्रकट न होगा। साधन करते-करते सात्त्विक श्रद्धा होती है। सात्त्विक श्रद्धा ही अपने इष्ट में, आत्मा में अपने-आपको अर्पित करने को तैयार हो जाती है। जैसे लोहा अग्नि की प्रशंसा तो करे, अग्नि को नमस्कार तो करे लेकिन जब तक वह अग्नि में प्रवेश नहीं करता, अपने-आपको अग्नि में समर्पित नहीं कर देता तब तक अग्निमय नहीं हो सकता। लोहा अग्नि में प्रविष्ट हो जाता है तो स्वयं अग्नि बन जाता है। उसकी रग-रग में अग्नि व्याप्त हो जाती है। ऐसे ही साधक जब तक ब्रह्मस्वरूप में अपने-आपको अर्पित नहीं करता, तब तक भले ब्रह्म-परमात्मा के गुणानुवाद करता रहे, ब्रह्मवेत्ता सद्गुरु के गीत गाता रहे, इससे लाभ तो होगा लेकिन ब्रह्मस्वरूप, गुरुमय, भगवन्मय, ईश्वरमय नहीं बन पाता। जब अपने-आपको ईश्वर में, ब्रह्म में, सद्गुरु में अर्पित कर देता है तो पूर्ण ब्रह्मस्वरूप हो जाता है। ❐

वह सामर्थ्य आपमें भी है

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

भगवन्नाम-संकीर्तन कलियुग का कल्पतरु है। संतों एवं शास्त्रों ने इसकी खूब महिमा गायी है। 'स्कंद पुराण' में आता है : 'सतयुग में सैकड़ों यज्ञों द्वारा भगवान की आराधना करके मनुष्य जिस फल को पाता है, उसे कलियुग में केवल भगवन्नाम का संकीर्तन करने से पाया जा सकता है।' संत नामदेवजी कहते हैं : 'भगवन्नाम जन्म-जन्मांतरों के रोग-शोक, दुःखों का हरण करता है।'

एक घटित घटना है। कुछ गाँवों में अकाल पड़ा था, इसलिए वहाँ के लोग आपस में मिलकर संतों के पास गये। बोले : 'बाबा ! बचाओ, लोग भूखे मर जायेंगे।' श्री हरिबाबाजी, पंडित जयशंकरजी, नित्यानंदजी, जौहरीलालजी और ललिताप्रसादजी - इन पाँच साधुओं ने गाँववालों की प्रार्थना सुनकर तय किया कि 'गाँववालों का दुःख दूर करना है। हम पाँचों लोग सुबह उठकर पाँच दिन तक कीर्तन करेंगे और बाद में लोगों में भंडारा करेंगे। बरसात कैसे नहीं आयेगी !' ये साधु भगवन्नाम-कीर्तन करते हुए क्रमशः बरोरा, निजामपुर, भेंसरौली, बेलबाबा, बरोरा-ईसापुर इन पाँच गाँवों में गये।

चौथे दिन की रात को जब ये साधु बेलबाबा गाँव में पहुँचे और लोगों के लिए भंडारे की तैयारी चल रही थी, तभी बादल घिरे और बरसना शुरू हुए। भोजन बन रहा था इसलिए साधुओं ने कहा : 'ये क्या कर रहे हैं दुष्ट मेघ !' सभीने जोर-जोर से तालियाँ बजाना शुरू कर दिया। 'अरे ! मारो, मारो, भगाओ, भगाओ दुष्ट मेघों को। भागते हैं कि नहीं भागते ! अरे, भगाओ मेघ के बच्चों को, अभी क्यों आये हैं ? भोजन बन रहा है, गाँव के लोग भोजन करेंगे। एक तो अकाल कर दिया फिर भोजन बिगाड़ने को आये हैं ! रुक जाओ, आज रात को बरसात नहीं होनी चाहिए। इतने दिन रुके, दो दिन और रुक जायेंगे तो क्या हो जायेगा !'

देखते-देखते बादल भाग गये। थोड़ी देर शांति से भोजन बना फिर कहीं से बादल आ गये। साधु बोले : 'अरे ! फिर आ गये, फिर आ गये ये दुष्ट मेघ, भगाओ। गाँव के भक्तों का भोजन खराब करेंगे, दलदल करेंगे ! सुबह यहाँ सत्संग होगा। उठाओ डंडा, भगाओ इन्द्र के चेलों को।' पाँच-सात साधुओं ने कहा : 'भागो-भागो' और देखते-देखते बादल बिखर गये, बरसात बंद हो गयी, भोजन बना। पाँचों गाँवों के लोग इकट्ठे हुए, भगवन्नाम-कीर्तन किया, थोड़ा सत्संग सुना। लोगों को आश्चर्य हुआ कि सत्संग और कीर्तन से मेघ भगाये भी जाते हैं और बरसाये भी जाते हैं। सत्संग और कीर्तन से कलियुग के दोष मिटाये जाते हैं। उन साधुओं ने बताया कि लोगों के मंगल के लिए हम कीर्तन करते थे तो हमारा सत्त्वगुण इतना बढ़ गया कि नींद कहाँ गयी, थकान कहाँ गयी कोई पता नहीं चला। उन साधुओं ने बड़ी सात्त्विकता का एहसास किया।

अहोभाव से भरकर पाँचों गाँवों के लोग इकट्ठे हो गये। बड़ा मैदान भी खचाखच भर गया। संतों के दर्शन, भगवन्नाम-कीर्तन तथा भगवान की कथा सुनने से गाँववालों के पाप मिटे। कलियुग में पाप, संताप, दुःख और दरिद्रता मिटाने का सबसे सरल उपाय है हरिनाम का जप-कीर्तन,

हरिकथा और अपने हरिस्वभाव में विश्रांति।

लोगों ने भगवान की कथा सुनी, भोजन किया और घर गये। शाम होते-होते तो घनघोर घटाएँ छा गयीं। संतों की प्रार्थना को भगवान कैसे ठुकरा सकते थे! ऐसी बरसात हुई कि सारा अकाल दूर हो गया और सुख-शांति, समृद्धि-समृद्धि हो गयी। पाँचों गाँवों के लोगों ने खूब उत्सव मनाया। आपका आत्मा, आपका वास्तविक स्वरूप भगवत्स्वरूप है। वह बरसात ला सकता है, बरसात को भगा भी सकता है। दुःख ला सकता है, दुःख को भगा भी सकता है और दुःख से असंग रह सकता है ऐसा आपका आत्मा है।

भगवन्नाम-कीर्तन करके चुप होने से ईश्वर तक अपना संकल्प पहुँचता है। जप-सुमिरन, प्रार्थना करके चुप होने से संकल्प की जड़ें मजबूत हो जाती हैं, यह साधु लोग जानते थे। आप लोग भी यह बात जानकर वह सामर्थ्य अपने में ला सकते हो। ❒

कृते यद् ध्यायतो विष्णुं त्रेतायां यजतो मखैः।
द्वापरे परिचर्यायां कलौ तद्धरिकीर्तनात्॥

'सतयुग में भगवान विष्णु के ध्यान से, त्रेता में यज्ञ से और द्वापर में भगवान की पूजा से जो फल मिलता था, वह सब कलियुग में भगवान के नाम-कीर्तनमात्र से ही प्राप्त हो जाता है।'

(श्रीमद् भागवत : १२.३.५२)

भगवान श्रीकृष्ण उद्धव से कहते हैं कि 'बुद्धिमान लोग कीर्तन-प्रधान यज्ञों के द्वारा भगवान का भजन करते हैं।'

यज्ञैः संकीर्तनप्रायैर्यजन्ति हि सुमेधसः।

(श्रीमद् भागवत : ११.५.३२)

'गरुड़ पुराण' में उपदिष्ट है :

यदीच्छसि परं ज्ञानं ज्ञानाच्च परमं पदम्।
तदा यत्नेन महता कुरु श्रीहरिकीर्तनम्॥

'यदि परम ज्ञान अर्थात् आत्मज्ञान की इच्छा है और आत्मज्ञान से परम पद पाने की इच्छा है तो खूब यत्नपूर्वक श्रीहरि के नाम का कीर्तन करो।'

साधना में बाधक	साधना में सहायक
(१) मान की चाह के गुलाम बनना।	(१) मान की चाह मिटाना।
(२) अति बोलना।	(२) मौन रहना, शांत रहना।
(३) यश की इच्छा से दिखावटी कार्य करना।	(३) अच्छे कार्य करके ईश्वर को अर्पण करना।
(४) अति निद्रा अथवा अनिद्रा।	(४) ठीक-ठीक नींद व ब्राह्ममुहूर्त में जागरण।
(५) हिंसक स्वभाव- शरीर, मन या वाणी से किसीको दुःख देना।	(५) तीनों प्रकार की अहिंसा।
(६) अति धन-वैभव और आडम्बर।	(६) सहज, सादा जीवन।
(७) विकार बढ़ानेवाला, जागतिक आकर्षण बढ़ानेवाला विनोद।	(७) भगवद्भाव बढ़ानेवाला विनोद।
(८) क्रोध और द्वेष।	(८) आवश्यकता पड़ने पर क्रोध और द्वेष रहित गर्जना तथा साक्षिभाव की सावधानी।
(९) काम, आसक्ति।	(९) भगवत्प्रीति व संयम पूर्वक संसार में जीना।
(१०) आलस्य और शौकीनीपना।	(१०) तत्परता और सहजता।

तो आज से साधना में बाधक बातों का त्याग करके साधना में सहायक बातों का अवलम्बन लो और अपने लक्ष्य को पा लो।

तीन महत्त्वपूर्ण सवाल

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

आज के मनुष्य को उसकी दुष्ट इच्छाओं-वासनाओं ने इतना त्रस्त कर रखा है कि वह पद-पद पर चिंताओं, परेशानियों, समस्याओं एवं दुःखों-कष्टों के थपेड़े खाता रहता है। वह सच्चा जीवन जीने का ढंग ही भूल चुका है। फरियादात्मक वृत्तियों ने उसके विकास को अवरुद्ध कर रखा है। जीने का सच्चा ढंग तो यही है कि परमेश्वर जो दे, उसीमें हम संतुष्ट रहें। जिनके पास लाखों-करोड़ों की सम्पत्ति थी, ऐशो-आराम के सभी साधन थे, बड़े-बड़े महल थे वे भी पूर्ण सुखी नहीं हो पाये तो आप उन परिस्थितियों-वस्तुओं की याचना क्यों करते हो जिनसे आपका जीवन भी दुःखमय बन सकता है ! आज आपके पास जो है, उसीमें संतुष्ट रहना सीखो। आपको जिसकी अत्यंत आवश्यकता है, उसकी पूर्ति स्वयं भगवान करेंगे इस नियम को अपने हृदय में बिठा दो।

जो सचमुच अपने जीवन का महत्त्व समझते हैं, वे जिससे अपना कल्याण हो ऐसा संग करते हैं, ऐसा दिव्य विचार करते हैं।

राजा सुषेण को विचार आया कि 'मैं जीवन का रहस्य समझनेवाले किसी महात्मा की शरण में जाऊँ। पंडित लोग मेरे मन का संदेह दूर नहीं कर सकते।'

राजा सुषेण गाँव के बाहर ठहरे हुए एक वेदांती महात्मा के पास पहुँचे। उस समय महात्मा अपनी वाटिका में सेवा कर रहे थे, पेड़-पौधे लगा रहे थे।

राजा बोले : ''बाबाजी ! मैं कुछ प्रश्नों का समाधान चाहता हूँ।''

बाबाजी : ''मेरे पास अभी समय नहीं है। मुझे अपनी वाटिका बनानी है।''

राजा ने सोचा कि 'बाबाजी काम कर रहे हैं और हम चुपचाप बैठें, यह ठीक नहीं।' राजा ने भी कुदाली-फावड़ा चलाया।

इतने में ही एक आदमी भागता-भागता आया और आश्रम में शरण लेने को घुसा तथा गिरकर बेहोश हो गया। महात्मा ने उसे उठाया। उसके सिर पर चोट लगी थी। महात्मा ने घाव पोंछा तथा जो कुछ औषधि थी, लगायी। राजा भी उसकी सेवा में लग गया। वह घायल आदमी जब होश में आया तो सामने राजा को देखकर चौंक उठा :

''राजासाहब ! आप मेरी चाकरी में ! मैं क्षमा माँगता हूँ...'' ऐसा कहकर वह रोने लगा। राजा ने पूछा : ''क्यों, क्या बात है ?''

''राजन् ! आप राजदरबार से बाहर एकांत में गये हैं, ऐसा जानकर मैं आपकी हत्या करने के लिए आपके पीछे पड़ा हुआ था। किंतु मेरी बात खुल गयी और आपके सैनिकों ने मेरा पीछा किया। मैं जान बचाकर भागा और इधर पहुँचा।''

महात्मा ने राजा से कहा : ''इसे क्षमा कर दो।''

राजा ने आज्ञा शिरोधार्य की। महात्मा ने उस आदमी को दूध पिलाकर रवाना कर दिया। फिर दोनों वार्तालाप करने बैठे। राजा बोले :

''महाराज ! मेरे तीन प्रश्न हैं : सबसे उत्तम समय कौन-सा है ? सबसे बढ़िया काम

तीन महत्त्वपूर्ण सवाल

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

आज के मनुष्य को उसकी दुष्ट इच्छाओं-वासनाओं ने इतना त्रस्त कर रखा है कि वह पद-पद पर चिंताओं, परेशानियों, समस्याओं एवं दुःखों-कष्टों के थपेड़े खाता रहता है। वह सच्चा जीवन जीने का ढंग ही भूल चुका है। फरियादात्मक वृत्तियों ने उसके विकास को अवरुद्ध कर रखा है। जीने का सच्चा ढंग तो यही है कि परमेश्वर जो दे, उसीमें हम संतुष्ट रहें। जिनके पास लाखों-करोड़ों की सम्पत्ति थी, ऐशो-आराम के सभी साधन थे, बड़े-बड़े महल थे वे भी पूर्ण सुखी नहीं हो पाये तो आप उन परिस्थितियों-वस्तुओं की याचना क्यों करते हो जिनसे आपका जीवन भी दुःखमय बन सकता है ! आज आपके पास जो है, उसीमें संतुष्ट रहना सीखो। आपको जिसकी अत्यंत आवश्यकता है, उसकी पूर्ति स्वयं भगवान करेंगे इस नियम को अपने हृदय में बिठा दो।

जो सचमुच अपने जीवन का महत्त्व समझते हैं, वे जिससे अपना कल्याण हो ऐसा संग करते हैं, ऐसा दिव्य विचार करते हैं।

राजा सुषेण को विचार आया कि 'मैं जीवन का रहस्य समझनेवाले किसी महात्मा की शरण में जाऊँ। पंडित लोग मेरे मन का संदेह दूर नहीं कर सकते।'

राजा सुषेण गाँव के बाहर ठहरे हुए एक वेदांती महात्मा के पास पहुँचे। उस समय महात्मा अपनी वाटिका में सेवा कर रहे थे, पेड़-पौधे लगा रहे थे।

राजा बोले : ''बाबाजी ! मैं कुछ प्रश्नों का समाधान चाहता हूँ।''

बाबाजी : ''मेरे पास अभी समय नहीं है। मुझे अपनी वाटिका बनानी है।''

राजा ने सोचा कि 'बाबाजी काम कर रहे हैं और हम चुपचाप बैठें, यह ठीक नहीं।' राजा ने भी कुदाली-फावड़ा चलाया।

इतने में ही एक आदमी भागता-भागता आया और आश्रम में शरण लेने को घुसा तथा गिरकर बेहोश हो गया। महात्मा ने उसे उठाया। उसके सिर पर चोट लगी थी। महात्मा ने घाव पोंछा तथा जो कुछ औषधि थी, लगायी। राजा भी उसकी सेवा में लग गया। वह घायल आदमी जब होश में आया तो सामने राजा को देखकर चौंक उठा :

''राजासाहब ! आप मेरी चाकरी में ! मैं क्षमा माँगता हूँ...'' ऐसा कहकर वह रोने लगा। राजा ने पूछा : ''क्यों, क्या बात है ?''

''राजन् ! आप राजदरबार से बाहर एकांत में गये हैं, ऐसा जानकर मैं आपकी हत्या करने के लिए आपके पीछे पड़ा हुआ था। किंतु मेरी बात खुल गयी और आपके सैनिकों ने मेरा पीछा किया। मैं जान बचाकर भागा और इधर पहुँचा।''

महात्मा ने राजा से कहा : ''इसे क्षमा कर दो।''

राजा ने आज्ञा शिरोधार्य की। महात्मा ने उस आदमी को दूध पिलाकर रवाना कर दिया। फिर दोनों वार्तालाप करने बैठे। राजा बोले :

''महाराज ! मेरे तीन प्रश्न हैं : सबसे उत्तम समय कौन-सा है ? सबसे बढ़िया काम

कौन-सा है और सबसे बढ़िया व्यक्ति कौन है ? ये तीनों प्रश्न मेरे दिमाग में वर्षों से घूम रहे हैं । आपके सिवाय इन प्रश्नों का समाधान करने की क्षमता किसीमें नहीं है । आप आत्मज्ञानी हैं, आप जीवन्मुक्त हैं, कृपा कर इनका समाधान करें ।''

महात्मा बोले : ''तुम्हारे प्रश्नों का मैंने प्रत्यक्ष उत्तर दे दिया है । फिर भी सुनो : सबसे बढ़िया एवं महत्त्वपूर्ण समय है- वर्तमान, जिसमें तुम जी रहे हो । इससे भी बढ़िया समय आयेगा तब कुछ करेंगे या बढ़िया समय था तब कुछ कर लेते... नहीं । अभी जो समय है, वही बढ़िया है ।

सबसे बढ़िया काम क्या है ? धर्मानुकूल जो कार्य कर रहे हो, उस कार्य को ईश्वर की पूजा समझकर बढ़िया-से-बढ़िया ढंग से करो । उस वक्त वही बढ़िया कार्य है ।

उत्तम-से-उत्तम व्यक्ति कौन ? जो तुम्हारे सामने हो, प्रत्यक्ष हो, वह सबसे उत्तम व्यक्ति है।''

राजा असमंजस में पड़ गये । बोले :

''बाबाजी ! मैं समझा नहीं ।''

तब बाबाजी ने समझाया : ''राजन् ! सबसे महत्त्वपूर्ण समय तो है वर्तमान । आज तुमने वर्तमान समय का सदुपयोग नहीं किया होता और तुम यहाँ से तुरंत वापस चल दिये होते तो कुछ अमंगल घटना घट जाती । यहाँ जो आदमी आया था उसका भाई युद्ध में मारा गया था । उसका बदला लेने के लिए वह तुम्हारे पीछे लगा था । मैं काम में लगा था और तुम भी वर्तमान समय का सदुपयोग करते हुए मेरे साथ लग गये तो वह संकट की वेला बीत गयी और तुम बच गये ।

सबसे बढ़िया काम क्या ? जो सामने आ जाय वही तो सबसे बढ़िया काम है । आज तुम्हारे सामने बगीचे का काम आ गया और तुम भी लग गये, वर्तमान को सँवारकर उसका सदुपयोग किया ।

सेवाभाव से कार्य करने से तुम्हारा दिल और स्वास्थ्य दोनों सँवरे । तुमने पुण्य भी अर्जित किया । इसी कर्म ने तुम्हें दुर्घटना से बचाया ।

बढ़िया-से-बढ़िया व्यक्ति वही है जो प्रत्यक्ष हो । उस आदमी के लिए अपने दिल में सद्भाव लाकर तुमने सेवा की । प्रत्यक्ष उपस्थित व्यक्ति के साथ यथायोग्य सद्व्यवहार किया तो उसका हृदय भी परिवर्तित हो गया, तुम्हारे प्रति उसका वैरभाव धुल गया ।

इस प्रकार तुम्हारे सामने जो आ जाय वह व्यक्ति बढ़िया है, तुम्हारे सामने शास्त्रानुकूल जो कार्य आ जाय वही उत्तम है और जो वर्तमान समय है वही बढ़िया है ।''

जिस समय आप जो काम करते हो, उसमें अपनी पूरी चेतना लगाओ, दिल लगाओ । टूटे हुए, हताश दिल से काम न करो । लापरवाही, पलायनवादिता से काम करना भूल है । हर कार्य को पूजा, ईश्वर की सेवा समझकर करो ।

आज होता क्या है ? हम हर कार्य को टालने की वृत्ति से करते हैं, अनमने होकर करते हैं तभी तो मन में प्रसन्नता नहीं आती । नहीं तो मन से काम करें और हृदय न खिले, तो धिक्कार है ऐसे कर्ता को !

यदि कार्य करते-करते आप ईश्वर-नाम जपते जायें, प्रभु-सुमिरन करते जायें, उसीमें एकाकार होते जायें तो फिर सोने पर सुहागा मानो । मंत्रजप से कार्य में कितना लाभ होगा, यह वाणी का विषय नहीं है । इससे आपका सतत सुमिरन, चिंतन और विश्रांति आरम्भ हो जायेगी और जिस क्षण आपका सतत सुमिरन, चिंतन और विश्रांति आरम्भ हो जायेगी, उसी क्षण आपके सारे कार्य पूर्ण हो जायेंगे क्योंकि यह स्वयं भगवान का वचन है :

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

'हे अर्जुन ! जो पुरुष मुझमें अनन्यचित्त होकर सदा ही निरंतर मुझ पुरुषोत्तम को स्मरण करता है, उस नित्य-निरंतर मुझमें युक्त हुए योगी के लिए मैं सुलभ हूँ अर्थात् उसे सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ ।' (गीता : ८.१४)

हनुमानजी, जाम्बवंत और अन्य वानर युद्ध करते थे तो रामजी की आराधना समझकर । आप जिस समय जो काम करो, उसमें रम जाओ, उसमें पूर्णरूप से एकाग्र हो जाओ । काम करने का भी आनंद आयेगा और परिणाम भी बढ़िया होगा । कम-से-कम समय लगे और अधिक-से-अधिक सुंदर परिणाम मिले, ऐसा कार्य करो । ये उत्तम कर्ता के लक्षण हैं ।

जिस समय जो व्यक्ति सामने आ जाय उस समय वह व्यक्ति श्रेष्ठ है, ऐसा समझकर उसके साथ व्यवहार करो क्योंकि श्रेष्ठ-में-श्रेष्ठ परमात्मा उसमें है । स्वार्थ की जगह पर स्नेह ले आओ, सहानुभूति और सच्चाई लाओ । फिर आपका सर्वांगीण विकास होगा और आपमें सत्संग का प्रसाद स्थिर होने लगेगा । यही तो है व्यावहारिक वेदांत ।

जब करो जो भी करो,
अर्पण करो भगवान को ।
सर्व कर दो समर्पण,
त्यागकर अभिमान को ।
मुक्ति का आनंद अनुभव,
सर्वदा क्यों खो रहे हो ?
अजन्मा है अमर आत्मा,
भय में जीवन खो रहे हो ॥ ❐

तुलसी ममता राम से...

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

दो मित्र थे । एक तो था किसान । वह सेवा करके, ध्यान-भजन करके तृप्त रहता था । दूसरा मित्र खूब काम-धंधा करता था और अपने मित्र को बोलता था : ''क्या रोज सत्संग में जाते हो !''

एक दिन किसान ने कहा : ''भाई ! देखो, हमें पाँच सेर जिंदा मेंढक चाहिए । अगर तू पाँच सेर मेंढक मँगाकर तौलके दे देगा तो मैं तुझे पाँच सौ नहीं पाँच हजार रुपये दूँगा ।''

उस लोभी ने क्या किया कि कैसे भी करके इधर-उधर तालाब में से मेंढक इकट्ठे करवाये और तौलने के लिए तराजू में रखे । अब ज्यों मेंढक रखे, तौले-न तौले त्यों कोई मेंढक छलाँग मारे । दूसरा मेंढक रखे तो तीसरा भागे । उसको पकड़े तो चौथा भागे । वह दिन भर तौलता रह गया पर पाँच सेर मेंढक तौल ही नहीं सका । एक को रखे तो दूसरा भागे, दूसरे को ठीक करे तो तीसरा उछले, तीसरे को ठीक करे तो चौथा कूदे । तो पाँच सेर मेंढक तौलना उसके लिए असम्भव हो गया ।

ऐसे ही इस संसार के पाँच विकार और पाँच भूतों में आप बराबर व्यवहार करके निश्चिंत हो जायें यह सम्भव ही नहीं । जैसे पाँच सेर जिंदा मेंढक खुले तौर पर तौलना सम्भव नहीं है, ऐसे ही संसार में सब ठीक-ठाक करके निश्चिंत रहना सम्भव नहीं है । कभी कुछ आयेगा, कभी कुछ आयेगा... कभी बेटे का तो कभी बेटी का... संसार के सारे काम किसके पूरे हुए ! जिनके अधूरे रहे उनके तो अधूरे रहे ही, लेकिन जिनके थोड़े-बहुत पूरे हुए उनके भी काम मृत्यु अधूरे कर देती है । इसीलिए संसार की ज्यादा चिंता और चिंतन न करो । उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम - ये छः सद्गुण हैं तो पद-पद पर परमात्म-सहायता मिलती है । तत्परता से काम करो, बाकी चिंतन भगवान का करो ।

तुलसी ममता राम से, समता सब संसार ।
राग न द्वेष न दोष दुःख, दास गये भवपार ॥

अनन्यचेताः सततं यो मां स्मरति नित्यशः ।
तस्याहं सुलभः पार्थ नित्ययुक्तस्य योगिनः ॥

'हे अर्जुन ! जो पुरुष मुझमें अनन्यचित्त होकर सदा ही निरंतर मुझ पुरुषोत्तम को स्मरण करता है, उस नित्य-निरंतर मुझमें युक्त हुए योगी के लिए मैं सुलभ हूँ अर्थात् उसे सहज ही प्राप्त हो जाता हूँ ।' (गीता : ८.१४)

हनुमानजी, जाम्बवंत और अन्य वानर युद्ध करते थे तो रामजी की आराधना समझकर । आप जिस समय जो काम करो, उसमें रम जाओ, उसमें पूर्णरूप से एकाग्र हो जाओ । काम करने का भी आनंद आयेगा और परिणाम भी बढ़िया होगा । कम-से-कम समय लगे और अधिक-से-अधिक सुंदर परिणाम मिले, ऐसा कार्य करो । ये उत्तम कर्ता के लक्षण हैं ।

जिस समय जो व्यक्ति सामने आ जाय उस समय वह व्यक्ति श्रेष्ठ है, ऐसा समझकर उसके साथ व्यवहार करो क्योंकि श्रेष्ठ-में-श्रेष्ठ परमात्मा उसमें है । स्वार्थ की जगह पर स्नेह ले आओ, सहानुभूति और सच्चाई लाओ । फिर आपका सर्वांगीण विकास होगा और आपमें सत्संग का प्रसाद स्थिर होने लगेगा । यही तो है व्यावहारिक वेदांत ।

जब करो जो भी करो,
अर्पण करो भगवान को ।
सर्व कर दो समर्पण,
त्यागकर अभिमान को ।
मुक्ति का आनंद अनुभव,
सर्वदा क्यों खो रहे हो ?
अजन्मा है अमर आत्मा,
भय में जीवन खो रहे हो ॥ ❑

तुलसी ममता राम से...

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

दो मित्र थे । एक तो था किसान । वह सेवा करके, ध्यान-भजन करके तृप्त रहता था । दूसरा मित्र खूब काम-धंधा करता था और अपने मित्र को बोलता था : ''क्या रोज सत्संग में जाते हो !''

एक दिन किसान ने कहा : ''भाई ! देखो, हमें पाँच सेर जिंदा मेंढ़क चाहिए । अगर तू पाँच सेर मेंढ़क मँगाकर तौलके दे देगा तो मैं तुझे पाँच सौ नहीं पाँच हजार रुपये दूँगा ।''

उस लोभी ने क्या किया कि कैसे भी करके इधर-उधर तालाब में से मेंढ़क इकट्ठे करवाये और तौलने के लिए तराजू में रखे । अब ज्यों मेंढ़क रखे, तौले-न तौले त्यों कोई मेंढ़क छलाँग मारे । दूसरा मेंढ़क रखे तो तीसरा भागे । उसको पकड़े तो चौथा भागे । वह दिन भर तौलता रह गया पर पाँच सेर मेंढ़क तौल ही नहीं सका । एक को रखे तो दूसरा भागे, दूसरे को ठीक करे तो तीसरा उछले, तीसरे को ठीक करे तो चौथा कूदे । तो पाँच सेर मेंढ़क तौलना उसके लिए असम्भव हो गया ।

ऐसे ही इस संसार के पाँच विकार और पाँच भूतों में आप बराबर व्यवहार करके निश्चिंत हो जायें यह सम्भव ही नहीं । जैसे पाँच सेर जिंदा मेंढ़क खुले तौर पर तौलना सम्भव नहीं है, ऐसे ही संसार में सब ठीक-ठाक करके निश्चिंत रहना सम्भव नहीं है । कभी कुछ आयेगा, कभी कुछ आयेगा... कभी बेटे का तो कभी बेटी का... संसार के सारे काम किसके पूरे हुए ! जिनके अधूरे रहे उनके तो अधूरे रहे ही, लेकिन जिनके थोड़े-बहुत पूरे हुए उनके भी काम मृत्यु अधूरे कर देती है । इसीलिए संसार की ज्यादा चिंता और चिंतन न करो । उद्यम, साहस, धैर्य, बुद्धि, शक्ति और पराक्रम - ये छः सद्गुण हैं तो पद-पद पर परमात्म-सहायता मिलती है । तत्परता से काम करो, बाकी चिंतन भगवान का करो ।

तुलसी ममता राम से, समता सब संसार ।
राग न द्वेष न दोष दुःख, दास गये भवपार ॥

बहुरत्ना वसुंधरा

मानव के जीवन में संसारी चीजों की कीमत तब तक होती है, जब तक उसको अपने जीवन के वास्तविक उद्देश्य का पता नहीं होता । जब उसे किन्हीं ब्रह्मनिष्ठ सद्गुरु से दीक्षा-शिक्षा मिल जाती है, जीवन के वास्तविक उद्देश्य का पता चल जाता है और गुरुमंत्ररूपी अमूल्य रत्न मिल जाता है तो फिर उसके जीवन में और किसी चीज की कीमत नहीं रह जाती । मेवाड़ की महारानी मीराबाई के जीवन में धन-धान्य की कोई कमी नहीं थी, परंतु जब उन्हें गुरु से भगवन्नाम की दीक्षा मिली तब वे कहती हैं :

पायो जी मैंने राम रतन धन पायो ।
वस्तु अमोलक दी मेरे सद्गुरु
कृपा करी अपनायो,
पायो जी मैंने राम रतन धन पायो ॥

ऐसे ही भक्त पुरंदरदासजी के जीवन में भी देखने को मिलता है ।

एक बार राजा कृष्णदेव के निमंत्रण पर भक्त पुरंदरदासजी राजमहल में पधारे । जाते समय राजा ने दो मुट्ठी चावल उनकी झोली में डालते हुए कहा : ''महाराज ! इस छोटी-सी भेंट को स्वीकार कर मुझे अनुगृहीत करें ।'' राजा ने उन चावलों में कुछ हीरे मिला दिये थे ।

पुरंदरदासजी की पत्नी ने घर पर चावल साफ करते समय देखा कि उनमें कुछ बहुमूल्य रत्न भी हैं तो उन्हें अलग कर कूड़ेदान में फेंक दिया ।

पुरंदरदासजी प्रतिदिन दरबार में जाते थे । राजा सदैव ही उन्हें दो मुट्ठी चावल के साथ हीरे मिलाकर दे देता पर मन में सोचता कि 'पुरंदरदासजी धन के लालच से मुक्त नहीं हैं । यदि वे मुक्त होते तो प्रतिदिन भिक्षा के लिए दरबार में क्यों आते !'

एक दिन राजा ने कहा : ''भक्तराज ! लालच मनुष्य को आध्यात्मिक उपलब्धियों से दूर कर देता है । अब आप स्वयं ही अपने विषय में विचार करें ।''

राजा के मुख से यह बात सुनकर भक्त पुरंदरदासजी को बड़ा दुःख हुआ । वे अगले दिन राजा को अपना घर दिखाने ले गये । उस समय पुरंदरदासजी की पत्नी थाली में चावल फैलाकर साफ कर रही थी । राजा ने पूछा : ''देवि ! आप क्या कर रही हो ?''

वह बोली : ''महाराज ! कोई व्यक्ति भिक्षा में चावल के साथ कुछ बहुमूल्य रत्न मिलाकर हमें देता है । मैं उन पत्थरों को निकालकर अलग कर रही हूँ ।''

''फिर क्या करेंगी उनका ?''

''घर के बाहर कूड़ेदान में फेंक दूँगी । हमारे लिए इन पत्थरों का कोई मूल्य नहीं है ।''

राजा ने उन सभी बहुमूल्य रत्नों को कूड़ेदान में पड़े देखा तो आश्चर्यचकित रह गया और भक्त-दम्पति के चरणों में गिर पड़ा ।

बहुरत्ना वसुंधरा... यह वसुंधरा, यह भारतभूमि ऐसे बहुविध मानव-रत्नों से सुशोभित है । धनसंग्रह से अलिप्त, बहुमूल्य रत्नों में पत्थरबुद्धि रखनेवाले भक्त पुरंदरदासजी व उनकी पत्नी जैसे भक्त भी यहाँ हुए हैं और लोक-मांगल्य के लिए धन का सदुपयोग कर सद्ज्ञान, सत्सेवा, सदाचार की विशाल पावन सरिता बहानेवाले संत एकनाथजी आदि महापुरुष भी इसी धरा पर हुए हैं । ❑

इनको कभी न खोयें

- पूज्य बापूजी

पाँच चीजें कभी नहीं खोनी चाहिए ।

(१) अपना समय व्यर्थ न खोयें ।

आपका समय इतना बहुमूल्य है कि समय देकर आप दुनिया की सब चीजें प्राप्त कर सकते हैं लेकिन दुनिया की सब चीजें न्योछावर करके भी आप बीते हुए आयुष्य का सौवाँ हिस्सा भी वापस नहीं पा सकते ।

पचास-साठ साल, अस्सी साल देकर आपने जो कुछ भी एकत्र किया, वह सब-का-सब आप दे दें, फिर भी पचास-साठ घण्टे तो क्या पाँच मिनट भी आप अपना आयुष्य नहीं बढ़ा सकते । इसलिए अपने अमूल्य समय को व्यर्थ न गँवायें, उसका खूब-खूब सदुपयोग करें । समय को किसीके आँसू पोंछने में लगायें, ईश्वरप्राप्ति में लगायें ।

जो लोग गपशप में, विषय-भोग में, मित्रों के साथ घूमने-फिरने में, कामनाओं की पूर्ति में, हास्य-विलास में समय को नष्ट कर देते हैं, वे लोग बड़ी गलती करते हैं । समय को बर्बाद करनेवाला स्वयं बर्बाद हो जाता है । अतः अपने जीवन के क्षण-क्षण को सँभालकर ऊँचे-में-ऊँचे, अति ऊँचे काम में लगाना चाहिए । आप समय को जैसे हलके, मध्यम या उत्तम काम में खर्च करते हैं तो बदला भी वैसा ही मिलता है । परम श्रेष्ठ परमात्मा के लिए समय खर्च करते हैं तो बदले में आप परमात्ममय बन जाते हैं । समय के सदुपयोग की बलिहारी है !

(२) स्वास्थ्य नहीं खोना चाहिए ।

सुखी जीवन के लिए शरीर और मन की स्वस्थता जरूरी है । घर, गाँव, क्षेत्र और शुभाशुभ कर्म पुनः-पुनः प्राप्त हो सकते हैं किंतु मनुष्य-शरीर पुनः-पुनः प्राप्त नहीं हो सकता । इसलिए बुद्धिमान व्यक्ति को सदैव स्वास्थ्य की रक्षा करते हुए पुण्य का अर्जन करना चाहिए ।

शरीर जितना नीरोग, स्वच्छ व पवित्र रहेगा, उतना ही आत्मा का प्रकाश इसमें अधिक प्रकाशित होगा । यदि दर्पण ही ठीक न होगा तो प्रतिबिम्ब कैसे दिखायी देगा ! यदि नींव ही कमजोर है तो इमारत कैसे बुलंद होगी ! शास्त्रों में आता है : **शरीरमाद्यं खलु धर्मसाधनम् ।** शरीर धर्म का साधन है । शरीर को स्वस्थ रखना जरूरी है । जो आदमी शरीर को स्वस्थ रखने की कला जानता है, वह बार-बार बीमारी का शिकार नहीं होता है । भगवान ने 'गीता' (६.१७) में भी शरीर स्वस्थ रखने की बात कही है :

युक्ताहारविहारस्य युक्तचेष्टस्य कर्मसु ।
युक्तस्वप्नावबोधस्य योगो भवति दुःखहा ॥

'दुःखों का नाश करनेवाला योग तो यथायोग्य आहार-विहार करनेवाले का, कर्मों में यथायोग्य चेष्टा करनेवाले का और यथायोग्य सोने तथा जागनेवाले का ही सिद्ध होता है ।'

शरीर एक मंदिर है जिसमें जीवात्मा का पूर्ण विकास हो सकता है । अतः हमें शरीर-स्वास्थ्य संबंधी कुछ हितकारी उपायों को जानकर अपने जीवन में उन्हें आत्मसात् करके स्वास्थ्य-लाभ लेना चाहिए, जिससे फिर स्वस्थ शरीर का उपयोग अशरीरी परमात्मा की प्राप्ति के निमित्त प्राणिमात्र की सेवा में हो सके और शास्त्र की यह बात

चरितार्थ हो सके :

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत् ॥

'सभी सुखी हों, सभी नीरोगी रहें, सभी सबका मंगल देखें और कोई दुःखी न हो ।'

(३) संयम नहीं खोना चाहिए ।

जिसके जीवन में संयम नहीं है वह पशु से भी गया-बीता हो जाता है । इसलिए जीवन में संयम की बहुत आवश्यकता है । संयमहीन मानव किसी भी क्षेत्र में सफल नहीं हो पाता और कभी प्रारब्ध से कुछ सफलता प्राप्त भी कर लेता है तो अहंकार में फूलकर अपने सर्वनाश को निमंत्रित करता है । जो मन संयम नहीं बरतता, वह किसी बड़े काम के लायक नहीं है । पशुओं के लिए चाबुक होता है परंतु मनुष्य को बुद्धि की लगाम है । सरिता भी दो किनारों से बँधी रहती है और सागर तक पहुँचती है । जिसने संयम, साधना करके अपने अंतःकरण के ज्ञान-स्वभाव की रक्षा की वह महान हो गया ।

हे भारत के युवानो ! तुम भी उसी गौरव को हासिल कर सकते हो । यदि जीवन में संयम को अपना लो, सदाचार को अपना लो एवं समर्थ सद्गुरु का सान्निध्य पा लो तो तुम भी महान-से-महान कार्य करने में सफल हो सकते हो । लगाओ छलाँग... कस लो कमर... संयमी बनो... ब्रह्मचारी बनो और 'युवाधन सुरक्षा अभियान' के माध्यम से अपने भाई-बंधुओं, मित्रों, पड़ोसियों को तो क्या सम्पूर्ण राष्ट्रवासियों को संयम की महिमा समझाओ, जिससे वे भी संयम का सहारा लेकर अपनी महिमा में जगने में सफल हो सकें ।

(४) सम्मान देने का गुण नहीं खोना चाहिए ।

छोटे-से-छोटा और बड़े-से-बड़ा व्यक्ति भी सम्मान चाहता है । सम्मान देने में रुपया-पैसा नहीं लगता है और सम्मान देते समय आपका हृदय भी पवित्र होता है । अगर आप किसीसे निर्दोष प्यार करते हैं तो खुशामद से हजार गुना ज्यादा प्रभाव उस पर पड़ता है । अतः स्वयं मान पाने की इच्छा न रखो वरन् औरों को सम्मान दो । मान योग्य कर्म करो पर हृदय में मान की इच्छा न रखो, आप अमानी रहो, इससे आपका हृदयकमल खिलेगा, भगवान को पाने के योग्य होगा ।

(५) अपना अच्छा स्वभाव नहीं खोना चाहिए ।

जो अच्छा कार्य, अच्छा चिंतन करता है उसको अच्छी चीजें, अच्छी संगति, अच्छे विचार, अच्छी आयु मिलती है। उसका स्वभाव अच्छा होने से मन भी अच्छा रहता है, स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है और अच्छे संस्कार लेकर वह सद्गति को पा लेता है । जो बुरे कार्य करता है, बुरे विचार करता है और बुराई के पीछे लगा रहता है उसको वैसे ही विचार, वैसे ही मित्र भी मिल जाते हैं और फिर उसकी गति भी ऐसी ही हो जाती है ।

समय रहते अपने विवेक को जगाकर अपना ऐसा-वैसा स्वभाव बदलकर पशुता से मनुष्यता, मनुष्यता से देवत्व और देवत्व से देवेश्वरत्व (परमात्म-तत्त्व) की तरफ जाने से आपका तो मंगल होगा, आपके कुल-खानदान में जो पैदा होनेवाले हैं उनका भी मंगल हो जायेगा । इसलिए भगवान ने कहा है : **स्वभावविजयः शौर्यम् ।**

आप अपने स्वभाव पर विजय पाओ ।

बस ये पाँच चीजें हैं - समय, स्वास्थ्य, संयम, सम्मान और स्वभाव, इन पाँच चीजों की जो रक्षा करता है, वे उसीकी रक्षा करके उसको महान बना देती हैं । ❐

चरितार्थ हो सके :

सर्वे भवन्तु सुखिनः सर्वे सन्तु निरामयाः ।
सर्वे भद्राणि पश्यन्तु मा कश्चिद् दुःखभाग्भवेत् ॥

'सभी सुखी हों, सभी नीरोगी रहें, सभी सबका मंगल देखें और कोई दुःखी न हो ।'

(३) संयम नहीं खोना चाहिए ।

जिसके जीवन में संयम नहीं है वह पशु से भी गया-बीता हो जाता है । इसलिए जीवन में संयम की बहुत आवश्यकता है । संयमहीन मानव किसी भी क्षेत्र में सफल नहीं हो पाता और कभी प्रारब्ध से कुछ सफलता प्राप्त भी कर लेता है तो अहंकार में फूलकर अपने सर्वनाश को निमंत्रित करता है । जो मन संयम नहीं बरतता, वह किसी बड़े काम के लायक नहीं है । पशुओं के लिए चाबुक होता है परंतु मनुष्य को बुद्धि की लगाम है । सरिता भी दो किनारों से बँधी रहती है और सागर तक पहुँचती है । जिसने संयम, साधना करके अपने अंतःकरण के ज्ञान-स्वभाव की रक्षा की वह महान हो गया ।

हे भारत के युवानो ! तुम भी उसी गौरव को हासिल कर सकते हो । यदि जीवन में संयम को अपना लो, सदाचार को अपना लो एवं समर्थ सद्गुरु का सान्निध्य पा लो तो तुम भी महान-से-महान कार्य करने में सफल हो सकते हो । लगाओ छलाँग... कस लो कमर... संयमी बनो... ब्रह्मचारी बनो और 'युवाधन सुरक्षा अभियान' के माध्यम से अपने भाई-बंधुओं, मित्रों, पड़ोसियों को तो क्या सम्पूर्ण राष्ट्रवासियों को संयम की महिमा समझाओ, जिससे वे भी संयम का सहारा लेकर अपनी महिमा में जगने में सफल हो सकें ।

(४) सम्मान देने का गुण नहीं खोना चाहिए ।

छोटे-से-छोटा और बड़े-से-बड़ा व्यक्ति भी सम्मान चाहता है । सम्मान देने में रुपया-पैसा नहीं लगता है और सम्मान देते समय आपका हृदय भी पवित्र होता है । अगर आप किसीसे निर्दोष प्यार करते हैं तो खुशामद से हजार गुना ज्यादा प्रभाव उस पर पड़ता है । अतः स्वयं मान पाने की इच्छा न रखो वरन् औरों को सम्मान दो । मान योग्य कर्म करो पर हृदय में मान की इच्छा न रखो, आप अमानी रहो, इससे आपका हृदयकमल खिलेगा, भगवान को पाने के योग्य होगा ।

(५) अपना अच्छा स्वभाव नहीं खोना चाहिए ।

जो अच्छा कार्य, अच्छा चिंतन करता है उसको अच्छी चीजें, अच्छी संगति, अच्छे विचार, अच्छी आयु मिलती है। उसका स्वभाव अच्छा होने से मन भी अच्छा रहता है, स्वास्थ्य भी अच्छा रहता है और अच्छे संस्कार लेकर वह सद्गति को पा लेता है । जो बुरे कार्य करता है, बुरे विचार करता है और बुराई के पीछे लगा रहता है उसको वैसे ही विचार, वैसे ही मित्र भी मिल जाते हैं और फिर उसकी गति भी ऐसी ही हो जाती है ।

समय रहते अपने विवेक को जगाकर अपना ऐसा-वैसा स्वभाव बदलकर पशुता से मनुष्यता, मनुष्यता से देवत्व और देवत्व से देवेश्वरत्व (परमात्म-तत्त्व) की तरफ जाने से आपका तो मंगल होगा, आपके कुल-खानदान में जो पैदा होनेवाले हैं उनका भी मंगल हो जायेगा । इसलिए भगवान ने कहा है : **स्वभावविजयः शौर्यम् ।**

आप अपने स्वभाव पर विजय पाओ ।

बस ये पाँच चीजें हैं - समय, स्वास्थ्य, संयम, सम्मान और स्वभाव, इन पाँच चीजों की जो रक्षा करता है, वे उसीकी रक्षा करके उसको महान बना देती हैं । ❐

अधिक मास का माहात्म्य

(अधिक मास : १५ अप्रैल से १४ मई)

अधिक मास में सूर्य की संक्रांति (सूर्य का एक राशि से दूसरी राशि में प्रवेश) न होने के कारण इसे 'मलमास' (मलिन मास) कहा गया। स्वामीरहित होने से यह मास देव-पितर आदि की पूजा तथा मंगल कर्मों के लिए त्याज्य माना गया। इससे लोग इसकी घोर निंदा करने लगे।

तब भगवान श्रीकृष्ण ने कहा : ''मैं इसे सर्वोपरि - अपने तुल्य करता हूँ। सद्गुण, कीर्ति, प्रभाव, षडैश्वर्य, पराक्रम, भक्तों को वरदान देने का सामर्थ्य आदि जितने गुण मुझमें हैं, उन सबको मैंने इस मास को सौंप दिया।

अहमेते यथा लोके प्रथितः पुरुषोत्तमः।
तथायमपि लोकेषु प्रथितः पुरुषोत्तमः॥

उन गुणों के कारण जिस प्रकार मैं वेदों, लोकों और शास्त्रों में 'पुरुषोत्तम' नाम से विख्यात हूँ, उसी प्रकार यह मलमास भी भूतल पर 'पुरुषोत्तम' नाम से प्रसिद्ध होगा और मैं स्वयं इसका स्वामी हो गया हूँ।''

इस प्रकार अधिक मास, मलमास 'पुरुषोत्तम मास' के नाम से विख्यात हुआ।

भगवान कहते हैं : ''इस मास में मेरे उद्देश्य से जो स्नान (ब्राह्ममुहूर्त में उठकर भगवत्स्मरण करते हुए किया गया स्नान), दान, जप, होम, स्वाध्याय, पितृतर्पण तथा देवार्चन किया जाता है, वह सब अक्षय हो जाता है। जो प्रमाद से इस मास को खाली बिता देते हैं, उनका जीवन मनुष्यलोक में दारिद्र्य, पुत्रशोक तथा पाप के कीचड़ से निंदित हो जाता है इसमें संदेह नहीं।

सुगंधित चंदन, अनेक प्रकार के फूल, मिष्टान्न, नैवेद्य, धूप, दीप आदि से लक्ष्मीसहित सनातन भगवान तथा पितामह भीष्म का पूजन करें। घंटा, मृदंग और शंख की ध्वनि के साथ कपूर और चंदन से आरती करें। ये न हों तो रुई की बत्ती से ही आरती कर लें। इससे अनंत फल की प्राप्ति होती है। चंदन, अक्षत और पुष्पों के साथ ताँबे के पात्र में पानी रखकर भक्ति से प्रातःपूजन के पहले या बाद में अर्घ्य दें। अर्घ्य देते समय भगवान ब्रह्माजी के साथ मेरा स्मरण करके इस मंत्र को बोलें :

देवदेव महादेव प्रलयोत्पत्तिकारक।
गृहाणार्घ्यमिमं देव कृपां कृत्वा ममोपरि॥
स्वयम्भुवे नमस्तुभ्यं ब्रह्मणेऽमिततेजसे।
नमोऽस्तुते श्रियानन्त दयां कुरु ममोपरि॥

'हे देवदेव! हे महादेव! हे प्रलय और उत्पत्ति करनेवाले! हे देव! मुझ पर कृपा करके इस अर्घ्य को ग्रहण कीजिये। तुझ स्वयंभू के लिए नमस्कार तथा तुझ अमिततेज ब्रह्मा के लिए नमस्कार। हे अनंत! लक्ष्मीजी के साथ आप मुझ पर कृपा करें।'

पुरुषोत्तम मास का व्रत दारिद्र्य, पुत्रशोक और वैधव्य का नाशक है। इसके व्रत से ब्रह्महत्या आदि सब पाप नष्ट हो जाते हैं।

विधिवत् सेवते यस्तु पुरुषोत्तममादरात्।
कुलं स्वकीयमुद्धृत्य मामेवैष्यत्यसंशयम्॥

प्रति तीसरे वर्ष में पुरुषोत्तम मास के आगमन पर जो व्यक्ति श्रद्धा-भक्ति के साथ व्रत, उपवास, पूजा आदि शुभकर्म करता है, वह निःसंदेह अपने समस्त परिवार के साथ

मेरे लोक में पहुँचकर मेरा सान्निध्य प्राप्त करता है।''

इस महीने में केवल ईश्वर के उद्देश्य से जो जप, सत्संग व सत्कथा-श्रवण, हरिकीर्तन, व्रत, उपवास, स्नान, दान या पूजनादि किये जाते हैं, उनका अक्षय फल होता है और व्रती के सम्पूर्ण अनिष्ट नष्ट हो जाते हैं। निष्काम भाव से किये जानेवाले अनुष्ठानों के लिए यह अत्यंत श्रेष्ठ समय है। **'देवी भागवत' के अनुसार यदि दान आदि का सामर्थ्य न हो तो संतों-महापुरुषों की सेवा सर्वोत्तम है, इससे तीर्थस्नानादि के समान फल प्राप्त होता है।**

इस मास में प्रातःस्नान, दान, तप, नियम, धर्म, पुण्यकर्म, व्रत-उपासना तथा निःस्वार्थ नाम जप-गुरुमंत्र जप का अधिक महत्त्व है।

इस महीने में दीपकों का दान करने से मनोकामनाएँ पूर्ण होती हैं। दुःख-शोकों का नाश होता है। वंशदीप बढ़ता है, ऊँचा सान्निध्य मिलता है, आयु बढ़ती है।

इस मास में आँवले और तिल का उबटन शरीर पर मलकर स्नान करना और आँवले के वृक्ष के नीचे भोजन करना यह भगवान श्री पुरुषोत्तम को अतिशय प्रिय है, साथ ही स्वास्थ्यप्रद और प्रसन्नताप्रद भी है। यह व्रत करनेवाले लोग बहुत पुण्यवान हो जाते हैं।

अधिक मास में वर्जित

इस मास में सभी सकाम कर्म एवं व्रत वर्जित हैं। जैसे - कुएँ, बावली, तालाब और बाग आदि का आरम्भ तथा प्रतिष्ठा, नवविवाहिता वधू का प्रवेश, देवताओं का स्थापन (देवप्रतिष्ठा), यज्ञोपवीत संस्कार, विवाह, नामकर्म, मकान बनाना, नये वस्त्र एवं अलंकार पहनना आदि।

अधिक मास में करने योग्य

प्राणघातक रोग आदि की निवृत्ति के लिए रुद्रजप आदि अनुष्ठान, दान व जप-कीर्तन आदि, पुत्रजन्म के कृत्य, पितृमरण के श्राद्धादि तथा गर्भाधान, पुंसवन जैसे संस्कार किये जा सकते हैं। ☐

आश्रम द्वारा 'इंटरनेट टी.वी.' का शुभारम्भ

देश-विदेश में फैले पूज्य बापूजी के भक्तों-साधकों के लिए एक सुखद समाचार है कि अहमदाबाद आश्रम द्वारा २४ घंटे प्रसारण वाले 'इंटरनेट टी.वी.' का शुभारम्भ किया जा रहा है। इसे आप ashramnews.org तथा ashram.org पर देख सकते हैं। इस पर आप निम्नलिखित कार्यक्रम देख सकेंगे :

१. पूज्य बापूजी के सत्संग का सजीव (लाइव) प्रसारण

२. अहमदाबाद आश्रम की त्रिकाल संध्या :

सुबह ५.४५ से, दोपहर ११.४५ से, सायं ६.३० से

३. 'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' का पाठ : रात्रि ९.३० से

इसके अलावा समय-समय पर पूज्य बापूजी के जीवन-चरित्र व लीलाएँ, अनमोल पुराने तात्त्विक सत्संग, कीर्तन, विद्यार्थियों के लिए संस्कार-सिंचन एवं जीवनोपयोगी बातें, पूज्य बापूजी के स्वास्थ्य-विषयक सत्संग, श्री सुरेशानंदजी के सत्संग, भजन, कीर्तन-यात्राएँ, आश्रम पर लगाये गये आरोपों का भंडाफोड़ तथा और भी बहुत कुछ...!

पिता का अपमान, टी.बी. का मेहमान

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

जो माता-पिता और गुरु की अवज्ञा करता है, उसको किसी-न-किसी जन्म में उसका फल भोगना ही पड़ता है । संत कबीरजी कहते हैं :

कबिरा वे नर अंध हैं,
हरि को कहते और गुरु को कहते और ।
हरि रूठे गुरु ठौर है, गुरु रूठे नहीं ठौर ॥

जैसे गुरु का ठुकराया हुआ कहीं का नहीं रहता, ऐसे माता-पिता के अपराधी को भी चुकाना पड़ता है ।

बंगाल के फरीदपुर जिले का जितेन्द्रनाथ दास वर्मन नामक एक युवक टी.बी. (राजयक्ष्मा) की बीमारी से इतना तो बुरी तरह घिर गया कि सारे इलाज व्यर्थ हो गये । कुलगुरु ने कहा कि ''यह रोग इस जन्म का नहीं है, पूर्वजन्म के किसी पाप का फल है । तुम भगवान तारकेश्वर की पूजा करो, वे ही तुम्हारी कुछ मदद करेंगे ।''

उस युवक ने अपने कुलगुरु के आदेशानुसार भगवान श्री तारकेश्वरजी के मंदिर में पूजा-प्रार्थना प्रारम्भ कर दी । कुछ ही दिनों के बाद तारकेश्वर भगवान उसके स्वप्न में आये और कहा : ''तूने पिछले जन्म में अपने पिता की अवज्ञा की थी, उनका अपमान किया था, उसीका फल है कि तू टी.बी. रोग से पीड़ित है और कोई इलाज काम नहीं कर रहा है । अब इस समय तेरा वह पूर्वजन्म का बाप फरीदपुर जिले के बड़े डॉक्टर श्री सत्यरंजन घोष के नाम से प्रसिद्ध है । तुम यदि उनकी चरणरज को ताबीज में मढ़ाकर धारण कर सको और प्रतिदिन उनका चरणोदक ले सको तथा वे संतुष्ट होकर तुम्हें क्षमा कर दें तो तुम ठीक हो सकते हो, इसके सिवाय दूसरा कोई उपाय नहीं है ।''

युवक ने स्वप्न की सारी बात अपने कुलगुरु को बतायी । कुलगुरु ने कहा कि ''यह तारकेश्वर भगवान की कृपा है कि तुझे नामसहित पता भी बता दिया ।'' वह युवक डॉक्टर साहब के पास गया । स्वप्न की बात बतायी और बोला : ''आप पिछले जन्म के मेरे पिता हो । मैंने आपका अपमान किया था, आपकी अवज्ञा की थी जिसके कारण मुझे टी.बी. रोग हो गया है । अब आप मुझे सेवा का अवसर दो ।''

पूर्वजन्म का पिता अभी डॉक्टर था । वह जानता था कि यह संक्रामक रोग है । उसने जल्दी हाँ नहीं भरी । बोला : ''तू पिछले जन्म का बेटा होगा तो होगा लेकिन इस जन्म में मैं तुझे साथ में रखूँ और कहीं मुझे भी टी.बी. हो जाय तो ? तू अभी अपने घर जा । तुझे नीरोग करने के लिए मैं कैसे और क्या सहयोग दूँ, इसके लिए मैं मेरे गुरुदेव धनंजयदास व्रज-विदेही से पत्र-व्यवहार करके मार्गदर्शन लूँगा फिर तुझे समाचार भेजूँगा ।''

डॉक्टर सत्यरंजन घोष ने अपने गुरुदेव को सारा विवरण लिख भेजा । गुरुदेव ने कहा : ''उसको घर में रखना तो खतरे से खाली नहीं, पड़ोस में कहीं मकान लेकर दो फिर भी उसके आने-जाने से गड़बड़ हो सकती है । उत्तम तरीका तो यह है कि उस युवक जितेन्द्रनाथ दास को अपना छायाचित्र दे दो और कह दो कि तुम अपने

घर में ही रहकर इस फोटो को साक्षात् अपना पिता मानकर सेवा-पूजा करो और चरणामृत लिया करो। कभी मौका मिलेगा तो मैं तुम्हें अपनी चरण-धूलि दे दूँगा, चरणामृत भी दे दूँगा। हिम्मत करो, तुम ठीक हो जाओगे।''

उस डॉक्टर ने अपने गुरुदेव के बताये अनुसार टी.बी. से पीड़ित उस युवक को पत्र लिखकर भेज दिया। पत्र में लिखे अनुसार उस युवक ने छायाचित्र मँगवाकर पूजा प्रारम्भ कर दी। ज्यों-ज्यों पूजा करता गया, त्यों-त्यों उसका रोग मिटता गया। समय पाकर पिछले जन्म का पिता, जो अभी डॉक्टर था, उसने अपना चरणोदक तथा चरणरज दे दी और बोला : ''मैंने तुझे माफ कर दिया।'' वह युवक उसी समय ठीक हो गया। डॉक्टर ने परीक्षण करके देखा तो पाया कि अब उसके फेफड़ों में कोई दोष नहीं है। वह एक दिन डॉक्टर साहब के पास रहा, पुनः उनका चरणोदक पीकर तथा चरणरज लेकर वापस चला गया। इसलिए कभी भी माता-पिता से ऐसा व्यवहार न करें कि उनको दुःखी होना पड़े। लेकिन जो भगवान के रास्ते जाते हैं उन्हें यह दोष नहीं लगता।

हमारे ऋषियों ने तो माता-पिता को देव कहकर पुकारा है : **मातृदेवो भव। पितृदेवो भव।**

एक बात और, मेरे पिताजी अंतिम समय में अर्थात् संसार से विदा लेते समय मेरी माँ के आगे हाथ जोड़कर बोले : ''कभी मैंने तुझको कुछ भला-बुरा कह दिया होगा, कभी हाथ भी उठ गया होगा, उसके लिए तू मुझे माफ कर देगी तो ठीक होगा, नहीं तो मुझे फिर भोगना पड़ेगा। किसी जन्म में आकर तेरी डाँट-फटकार और पिटाई मुझे सहन करनी पड़ेगी।''

मेरी माँ ने कहा : ''अच्छा तो मुझसे भी तो कोई गलती हुई होगी, आप माफ कर दो।''

(शेष पृष्ठ २४ पर)

अच्छे बालक की पहचान

अच्छे बालक की पहचान,
बतलाते सद्गुरु भगवान।
सुबह ब्राह्ममुहूर्त में उठता,
करता परमात्मा का ध्यान।
कर-दर्शन कर धरती माँ के,
नित करता चरणों में प्रणाम।
नित्यक्रिया से निवृत होकर,
नित करता मानव स्नान।
पूर्वाभिमुख हो आसन पर,
निश्चल मन करता जप-ध्यान।
त्राटक करता गुरुमूर्ति पर,
योगासन और करे प्राणायाम।
सूर्यदेव को अर्घ्य है देता,
तुलसी दल खा करे जलपान।
मात-पिता को शीश नवाता,
गुरुजन का करता सम्मान।
विद्यालय में नित पढ़ने जाता,
पठन-पाठन कर धर ध्यान।
गुरु, गणपति, माँ शारदे का,
निशदिन करता है गुणगान।
सात्त्विक भोजन ही करता है,
प्रभु अर्पण कर सुबहो-शाम।
सद्गुरु संतवचन नित सुनता,
चलता उनकी आज्ञा मान।
धर्म, संस्कृति, देश की रक्षा,
पर देता वह खूब ध्यान।
दीन-दुःखी लाचार जनों की,
सेवा करता त्याग अभिमान।
आलस त्यागो अब तो जागो,
बनो ध्रुव प्रह्लाद समान।
ऐसे बालक राष्ट्र-रत्न हैं,
इनसे धरती है धनवान।

- रामदास, जयपदीकलाँ, जि. मिर्जापुर (उ.प्र.)।

घर में ही रहकर इस फोटो को साक्षात् अपना पिता मानकर सेवा-पूजा करो और चरणामृत लिया करो। कभी मौका मिलेगा तो मैं तुम्हें अपनी चरण-धूलि दे दूँगा, चरणामृत भी दे दूँगा। हिम्मत करो, तुम ठीक हो जाओगे।''

उस डॉक्टर ने अपने गुरुदेव के बताये अनुसार टी.बी. से पीड़ित उस युवक को पत्र लिखकर भेज दिया। पत्र में लिखे अनुसार उस युवक ने छायाचित्र मँगवाकर पूजा प्रारम्भ कर दी। ज्यों-ज्यों पूजा करता गया, त्यों-त्यों उसका रोग मिटता गया। समय पाकर पिछले जन्म का पिता, जो अभी डॉक्टर था, उसने अपना चरणोदक तथा चरणरज दे दी और बोला : ''मैंने तुझे माफ कर दिया।'' वह युवक उसी समय ठीक हो गया। डॉक्टर ने परीक्षण करके देखा तो पाया कि अब उसके फेफड़ों में कोई दोष नहीं है। वह एक दिन डॉक्टर साहब के पास रहा, पुनः उनका चरणोदक पीकर तथा चरणरज लेकर वापस चला गया। इसलिए कभी भी माता-पिता से ऐसा व्यवहार न करें कि उनको दुःखी होना पड़े। लेकिन जो भगवान के रास्ते जाते हैं उन्हें यह दोष नहीं लगता।

हमारे ऋषियों ने तो माता-पिता को देव कहकर पुकारा है : **मातृदेवो भव। पितृदेवो भव।**

एक बात और, मेरे पिताजी अंतिम समय में अर्थात् संसार से विदा लेते समय मेरी माँ के आगे हाथ जोड़कर बोले : ''कभी मैंने तुझको कुछ भला-बुरा कह दिया होगा, कभी हाथ भी उठ गया होगा, उसके लिए तू मुझे माफ कर देगी तो ठीक होगा, नहीं तो मुझे फिर भोगना पड़ेगा। किसी जन्म में आकर तेरी डाँट-फटकार और पिटाई मुझे सहन करनी पड़ेगी।''

मेरी माँ ने कहा : ''अच्छा तो मुझसे भी तो कोई गलती हुई होगी, आप माफ कर दो।''

(शेष पृष्ठ २४ पर)

अच्छे बालक की पहचान

अच्छे बालक की पहचान,
बतलाते सद्गुरु भगवान।
सुबह ब्राह्ममुहूर्त में उठता,
करता परमात्मा का ध्यान।
कर-दर्शन कर धरती माँ के,
नित करता चरणों में प्रणाम।
नित्यक्रिया से निवृत होकर,
नित करता मानव स्नान।
पूर्वाभिमुख हो आसन पर,
निश्चल मन करता जप-ध्यान।
त्राटक करता गुरुमूर्ति पर,
योगासन और करे प्राणायाम।
सूर्यदेव को अर्घ्य है देता,
तुलसी दल खा करे जलपान।
मात-पिता को शीश नवाता,
गुरुजन का करता सम्मान।
विद्यालय में नित पढ़ने जाता,
पठन-पाठन कर धर ध्यान।
गुरु, गणपति, माँ शारदे का,
निशदिन करता है गुणगान।
सात्त्विक भोजन ही करता है,
प्रभु अर्पण कर सुबहो-शाम।
सद्गुरु संतवचन नित सुनता,
चलता उनकी आज्ञा मान।
धर्म, संस्कृति, देश की रक्षा,
पर देता वह खूब ध्यान।
दीन-दुःखी लाचार जनों की,
सेवा करता त्याग अभिमान।
आलस त्यागो अब तो जागो,
बनो ध्रुव प्रह्लाद समान।
ऐसे बालक राष्ट्र-रत्न हैं,
इनसे धरती है धनवान।

– रामदास, जयपदीकलाँ, जि. मिर्जापुर (उ.प्र.)।

क्या आश्चर्य है !

महाभारत के युद्ध में अपने १०० पुत्रों और सारी सेना का संहार हो जाने से धृतराष्ट्र बड़े दुःखी हुए। उनके शोक को शांत करने के लिए धर्मात्मा विदुरजी ने मधुर, सांत्वनापूर्ण वाणी में धर्म का उपदेश दिया।

तब राजा धृतराष्ट्र ने कहा : "विदुरजी ! धर्म के इस गूढ़ रहस्य का ज्ञान बुद्धि से ही हो सकता है। अतः तुम मेरे आगे विस्तारपूर्वक इस बुद्धिमार्ग को कहो।"

विदुरजी कहने लगे : "राजन् ! भगवान स्वयंभू को नमस्कार करके मैं इस संसाररूप गहन वन के उस स्वरूप का वर्णन करता हूँ, जिसका निरूपण महर्षियों ने किया है। एक ब्राह्मण किसी विशाल वन में जा रहा था। वह एक दुर्गम स्थान में जा पहुँचा। उसे सिंह, व्याघ्र, हाथी, रीछ आदि भयंकर जंतुओं से भरा देखकर उसका हृदय बहुत ही घबरा उठा, उसे रोमांच हो आया और मन में बड़ी उथल-पुथल होने लगी। उस वन में इधर-उधर दौड़कर उसने बहुत ढूँढ़ा कि कहीं कोई सुरक्षित स्थान मिल जाय परंतु वह न तो वन से निकलकर दूर ही जा सका और न उन जंगली जीवों से त्राण ही पा सका। इतने में ही उसने देखा कि वह भीषण वन सब ओर जाल से घिरा हुआ है। एक अत्यंत भयानक स्त्री ने उसे अपनी भुजाओं से घेर लिया है तथा पर्वत के समान ऊँचे पाँच सिरवाले नाग भी उसे सब ओर से घेरे हुए हैं। उस वन के बीच में झाड़-झंखाड़ों से भरा हुआ एक गहरा कुआँ था। वह ब्राह्मण इधर-उधर भटकता उसीमें गिर गया किंतु लताजाल में फँसकर वह ऊपर को पैर और नीचे को सिर किये बीच में ही लटक गया।

इतने में ही कुएँ के भीतर उसे एक बड़ा भारी सर्प दिखायी दिया और ऊपर की ओर उसके किनारे पर एक विशालकाय हाथी दिखा। उसके शरीर का रंग सफेद और काला था तथा उसके छः मुख और बारह पैर थे। वह धीरे-धीरे उस कुएँ की ओर ही आ रहा था। कुएँ के किनारे पर जो वृक्ष था, उसकी शाखाओं पर तरह-तरह की मधुमक्खियों ने छत्ता बना रखा था। उससे मधु की कई धाराएँ गिर रही थीं। मधु तो स्वभाव से ही सब लोगों को प्रिय है। अतः वह कुएँ में लटका हुआ पुरुष इन मधु की धाराओं को ही पीता रहता था। इस संकट के समय भी मधु पीते-पीते उसकी तृष्णा शांत नहीं हुई और न उसे अपने ऐसे जीवन के प्रति वैराग्य ही हुआ। जिस वृक्ष के सहारे वह लटका हुआ था, उसे रात-दिन काले और सफेद चूहे काट रहे थे। इस प्रकार इस स्थिति में उसे कई प्रकार के भयों ने घेर रखा था। वन की सीमा के पास हिंसक जंतुओं से और अत्यंत उग्ररूपा स्त्री से भय था, कुएँ के नीचे नाग से और ऊपर हाथी से आशंका थी, पाँचवाँ भय चूहों के वृक्ष को काट देने पर गिरने का था और छठा भय मधु के लोभ के कारण मधुमक्खियों से भी था। इस प्रकार संसार-सागर में पड़कर भी वह वहीं डटा हुआ था तथा जीवन की आशा बनी रहने से उसे उससे वैराग्य भी नहीं होता था।

महाराज ! मोक्षतत्त्व के विद्वानों ने यह एक दृष्टांत कहा है। इसे समझकर धर्म का आचरण

करने से मनुष्य परलोक में सुख पा सकता है। यह जो विशाल वन कहा गया है, वह यह विस्तृत संसार ही है। इसमें जो दुर्गम जंगल बताया है, वह इस संसार की ही गहनता है। इसमें जो बड़े-बड़े हिंस्र जीव बताये गये हैं, वे तरह-तरह की व्याधियाँ हैं तथा इसकी सीमा पर जो बड़े डीलडौलवाली स्त्री है वह वृद्धावस्था है, जो मनुष्य के रूप-रंग को बिगाड़ देती है। उस वन में जो कुआँ है, वह मनुष्य-देह है। उसमें नीचे की ओर जो नाग बैठा हुआ है, वह स्वयं काल ही है। वह समस्त देहधारियों को नष्ट कर देनेवाला और उनके सर्वस्व को हड़प जानेवाला है। कुएँ के भीतर जो लता है, जिसके तंतुओं में यह मनुष्य लटका हुआ है, वह इसके जीवन की आशा है तथा ऊपर की ओर जो छः मुँहवाला हाथी है वह संवत्सर (वर्ष) है। छः ऋतुएँ उसके मुख हैं तथा बारह महीने पैर हैं। उस वृक्ष को जो चूहे काट रहे हैं, उन्हें रात-दिन कहा गया है तथा मनुष्य की जो तरह-तरह की कामनाएँ हैं, वे मधुमक्खियाँ हैं। मक्खियों के छत्ते से जो मधु की धाराएँ चू रही हैं, उन्हें भोगों से प्राप्त होनेवाले रस समझो, जिनमें अधिकांश मनुष्य डूबे रहते हैं। बुद्धिमान लोग संसारचक्र की गति को ऐसा ही समझते हैं, तभी वे वैराग्यरूपी तलवार से इसके पाशों को काटते हैं।''

धृतराष्ट्र ने कहा : ''विदुर ! तुम बड़े तत्त्वदर्शी हो। तुमने मुझे बड़ा सुंदर आख्यान सुनाया है। तुम्हारे अमृतमय वचनों को सुनकर मुझे बड़ा हर्ष होता है।''

विदुरजी बोले : ''राजन् ! शास्त्रज्ञों ने गहन संसार को वन बताया है। यही मनुष्यों तथा चराचर प्राणियों का संसारचक्र है। विवेकी पुरुष को इसमें आसक्त नहीं होना चाहिए। मनुष्यों की जो प्रत्यक्ष और परोक्ष शारीरिक तथा मानसिक व्याधियाँ हैं, उन्हींको बुद्धिमानों ने हिंस्र जीव बताया है। मंदमति पुरुष इन व्याधियों से तरह-तरह के क्लेश और आपत्तियाँ उठाने पर भी संसार से विरक्त नहीं होते। यदि किसी प्रकार मनुष्य इन व्याधियों के पंजे से निकल भी जाय तो अंत में इसे वृद्धावस्था तो घेर ही लेती है। इसीसे यह तरह-तरह के शब्द, स्पर्श, रूप, रस और गंधों से घिरकर मज्जा और मांसरूप कीचड़ से भरे हुए आश्रयहीन देहरूप गड्ढे में पड़ा रहता है। वर्ष, मास, पक्ष और दिन-रात की संधियाँ - ये क्रमशः इसके रूप और आयु का नाश किया करते हैं। ये सब काल के ही प्रतिनिधि हैं, इस बात को मूढ़ पुरुष नहीं जानते।

अतः बुद्धिमान पुरुष को संसार की निवृत्ति का ही प्रयत्न करना चाहिए, इस ओर से लापरवाही नहीं करनी चाहिए।

मनुष्य को चाहिए कि अपने मन को काबू में करके ब्रह्मज्ञानरूप महौषधि प्राप्त करे और उसके द्वारा इस संसार-दुःखरूप महारोग को नष्ट कर दे। इस दुःख से संयमी चित्त के द्वारा जैसा छुटकारा मिल सकता है, वैसा पराक्रम, धन, मित्र या हितैषी किसीकी भी सहायता से नहीं मिल सकता।

जो बुद्धिहीन पुरुष तरह-तरह के माया-मोह में फँसे हुए हैं और जिन्हें बुद्धि के जाल ने बाँध रखा है, वे भिन्न-भिन्न योनियों में भटकते रहते हैं।'' ❑

महत्त्वपूर्ण निवेदन

सदस्यों के डाक-पते में परिवर्तन अगले अंक के बाद के अंक से कार्यान्वित होगा। जो सदस्य जून २०१० के अंक से अपना पता बदलवाना चाहते हैं, वे कृपया अप्रैल २०१० के अंत तक अपना नया पता भेज दें।

ईश्वरप्राप्ति सरल कैसे ?

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

ईश्वरप्राप्ति का गणित बहुत सरल है। लोगों ने विषय-विकारों को महत्त्व देके, किसीने कल्पना और व्याख्या कर-करके ईश्वरप्राप्ति के मार्ग को कोई बड़ा लम्बा-चौड़ा कठिन मार्ग मान लिया। ईश्वरप्राप्ति से सुगम कुछ है ही नहीं। मैं तो यह बात मानने को तैयार हूँ कि रोटी बनाना कठिन है लेकिन ईश्वरप्राप्ति कठिन नहीं है। अगर आटा गूँधना नहीं आये तो आटे में गाँठ-गाँठ हो जाती है। रोटी सेंकनी न आये तो हाथ जल जाता है। परमात्मप्राप्ति में तो न हाथ जलने का डर है, न आटा खराब होने का डर है वह तो सहज है।

संसार की प्राप्ति में तो अपना पुरुषार्थ चाहिए, अपना प्रारब्ध चाहिए, वातावरण चाहिए तब संसार की चीजें मिलती हैं और मिल-मिलकर चली जाती हैं। भगवान की प्राप्ति में तो केवल तीव्र इच्छा हो जाय बस, फिर तो भगवान अपने-आप अंदर कृपा करते हैं - यह अनुभव वसिष्ठजी महाराज का है।

'श्री योगवासिष्ठ महारामायण' में आता है कि 'हे रामजी ! फूल-पत्ता और टहनी मसलने में परिश्रम है, अपने आत्मा-परमात्मा को पाने में क्या परिश्रम है !'

उपदेशमात्र से मान तो लेते हैं कि परमात्मप्राप्ति ही सार है, सुनते-सुनते, विचार करते-करते, जगत के थप्पड़ खाते-खाते लगता है कि तत्त्वज्ञान के बिना, परमात्मज्ञान के बिना जीवन व्यर्थ है किंतु उसमें टिक नहीं पाते क्योंकि टिकने की सात्त्विक बुद्धि, दृढ़ निश्चय, सजगता और तड़प नहीं है। आहार-विहार पवित्र हो, बुद्धि सात्त्विक हो, सजगता हो तथा परमात्मप्राप्त महापुरुषों में और उनके वचनों में महत्त्वबुद्धि हो, परमात्मप्राप्ति की तीव्र तड़प हो तो टिकना कोई कठिन नहीं है। शाश्वत में महत्त्वबुद्धि के अभाव से ही सहज, सुलभ परमात्मा दुर्लभ हो रहा है। नश्वर में महत्त्वबुद्धि होने का फल यह दुर्भाग्य है कि सब कुछ करते-कराते भी दुःख, शोक, जन्म-मरण की यातनाएँ मिटतीं नहीं।

सुबह नींद में से उठते ही थोड़ी देर चुप बैठो और विचारो कि 'वह कौन है जो आँखों को देखने की, मन को सोचने की, बुद्धि को निर्णय करने की सत्ता देता है ?' उसीमें शांत हो जाओ, परमात्मप्राप्ति के नजदीक आ जाओगे। दुःख आये उससे जुड़ो नहीं, सुख आये उससे मिलो नहीं। सुख को बाँटो और दुःख में सम रहो तो उनका जो साक्षी है उस परमात्मा में टिकने लगोगे। वह इतना निकट है कि

सो साहब सद सदा हजूरे।
अंधा जानत ताँको दूरे॥

ज्ञानचक्षु नहीं हैं और बाहर भागने की आदत है इसीलिए वह कठिन लग रहा है, नहीं तो ईश्वरप्राप्ति जैसा कोई सुगम कार्य नहीं है।

ईश्वरः सर्वभूतानां हृद्देशेऽर्जुन तिष्ठति।
भ्रामयन्सर्वभूतानि यंत्रारूढानि मायया॥

'शरीररूपी यंत्र में आरूढ़ हुए सम्पूर्ण प्राणियों को अंतर्यामी परमेश्वर अपनी माया से उनके कर्मों के अनुसार भ्रमण कराता हुआ सब प्राणियों के हृदय में स्थित है।' **(गीता : १८.६१)**

जैसे गाड़ी में बैठनेवालों को गाड़ी की गति

प्राप्त होती है, जहाज में बैठनेवाला जहाज की गति से भागता है, बस में बैठनेवाला बस की गति से भागता है, कार में बैठनेवाला कार की गति से भागता है ऐसे ही यह इन्द्रियों में बैठनेवाला, मन-बुद्धि में बैठनेवाला, सुख-दुःख में बैठनेवाला जीव इन्हीं यंत्रों में उलझ गया है। जहाँ से बैठने की सत्ता आती है उसमें बैठो तो अभी ईश्वरप्राप्ति हो जाय, जैसे अर्जुन को भगवान की कृपा से बात समझ में आ गयी।

नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा। (गीता : १८.७३)

अगर कठिन होता तो परीक्षित राजा को सात दिन में कैसे मिल जाता! भगवत्पाद लीलाशाहजी बापू की कृपा हम पर ४० दिन में कैसे बरसती और कैसे मिल जाता!

एक वर्ष तक ॐकार का जप करे, नीच कर्मों का त्याग करे और ईश्वरप्राप्ति का ऊँचा उद्देश्य बना ले तो साधारण-से-साधारण आदमी को भी ईश्वरप्राप्ति सहज में हो जाय। लेकिन हमारी रुचि है - यह हो जाय, वह हो जाय... । जो हो-होकर बदलता है वही करने की रुचि रखते हैं।

मान मिल जाय, बड़े हो जायें, बापूजी जैसे हो जायें ऐसा कुछ नहीं चाहिए। हर फूल अपनी जगह पर खिलता है, किसीकी नकल नहीं करनी है और बाहर से बापूजी जैसा हो जाने से ईश्वरप्राप्ति हो जाती है इस वहम में नहीं पड़ना। जो जहाँ है ईश्वरप्राप्ति का अधिकारी है और सोचे कि 'बाहर से बापूजी जैसा हो जाऊँ', तो माइयों को तो दाढ़ी आयेगी नहीं, तो क्या ईश्वर नहीं मिलेगा? जिनके सिर पर बाल नहीं हैं, क्या उनको ईश्वर नहीं मिलेगा? बाहर से नकल नहीं करनी है, केवल उस मिले-मिलाये में प्रीति चाहिए।

भगवान से प्रीति करने की, भगवान को पाने की महत्ता समझ में आ जाय तो मन पवित्र होने लगता है। ज़ब तक भगवान को पाने की महत्ता का पता नहीं, तभी तक सारे दुःख विद्यमान रहते हैं। ईश्वर को पाने में ही सार है- ऐसा नहीं जानते, तभी तक छल-कपट आदि सारे दुर्गुण विद्यमान रहते हैं। यदि यह समझ में आ जाय तो सारे छल-कपट कम होते चले जायेंगे, सारी शिकायतें दूर होती चली जायेंगी। जिसको ईश्वरप्राप्ति की रुचि नहीं है उसको गलती बताओगे तो सफाई देगा, अपनी गलती नहीं मानेगा और ज्यों-ज्यों सफाई देगा त्यों-त्यों उसकी गलती गहरी उतरती जायेगी। उसको पता ही नहीं चलेगा कि मैं अपने ही पैर पर कुल्हाड़ी मार रहा हूँ और उसका परमात्मप्राप्ति का मार्ग लम्बा होता चला जायेगा।

तो ईश्वरप्राप्ति में रुचि हो जाय। और यह रुचि कैसे हो? बार-बार सत्संग का आश्रय लो, ईश्वर का नाम लो, उसका गुणगान करो, उसको प्रीति करो। और कभी फिसल जाओ तो आर्तभाव से पुकारो। वे परमात्मा-अंतरात्मा सहाय करते हैं, सहाय करते हैं, बिल्कुल करते हैं। ॐ नारायण... ॐ गोविंद... ॐ अच्युत... ॐ केशव... ॐ परमेश्वर... ॐ सर्वसुहृदाय नमः... ॐ अंतर्यामी... ॐ सर्वज्ञ... ॐ दयानिधये नमः... ॐ ॐ... ❑

विशेष सूचना

सूचित किया जाता है कि 'ऋषि प्रसाद' पत्रिका की सदस्यता के नवीनीकरण के समय पुराना सदस्यता क्रमांक/रसीद क्रमांक एवं सदस्यता 'पुरानी' है - ऐसा लिखना अनिवार्य है। सदस्यता की शुरुआत किस माह से करनी है यह भी अवश्य लिखें। जिसकी रसीद में ये नहीं लिखे होंगे, उस सदस्य को नया सदस्य माना जायेगा। आजीवन सदस्यों के अलावा नये सदस्यों की सदस्यता एक माह पूर्व से शुरू की जायेगी तथा सदस्यता के अंतर्गत उन्हें एक पूर्व-प्रकाशित अंक भेजा जायेगा।

सौ प्रतिशत दुःख मिटाने का साधन

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

संसार के विषय-विकारों में, बेईमानी में, दादागिरी में अगर दुःख मिटाने की ताकत होती तो लोग निर्दुःख हो जाते। धरती का कोई भी माई का लाल दादागिरी करके, चालाकी करके, कुर्सी पाकर अथवा कुछ भी पाकर निर्दुःख हो जाय यह सम्भव नहीं है। संसारी सुखों के प्रभाव से दुःख दब जाते हैं और सुखभोक्ता खोखला होता जाता है, अंत में बेचारा दुःखी होकर मर जाता है।

पचास प्रतिशत दुःख मिटाने की ताकत शुभकर्मों में है और नब्बे प्रतिशत दुःख मिटाने की ताकत भक्ति में है। संसार के विषय-विकारों और चालाकियों में दुःख मिटाने की ताकत नहीं, दुःख दबाने की कला है। जैसे अंग्रेजी दवाओं से बीमारी दबती है और समय पाकर फिर उभरती है। गंदगी है समझकर चादर डाल दी तो गंदगी दब गयी लेकिन चादर भी गंदगी के रूप में बदल जायेगी।

दुःख हम चाहते नहीं, फिर भी दुःख आता है तो इसका कारण क्या है ? और सभी लोगों को एक ही घटना से एक जैसा दुःख नहीं होता है। जिसकी जिस वस्तु में जितनी ज्यादा आसक्ति होती है, उसको उस वस्तु के चले जाने पर उतना ही ज्यादा दुःख होता है।

दो व्यक्ति जा रहे हैं। उनके शरीर पर कोई खास कपड़ा नहीं है, पैर में जूता नहीं है, सिर पर छाता नहीं है, टोपी नहीं है, साधारण फटे कपड़े में जा रहे हैं। उनमें एक व्यक्ति विरक्त है, फक्कड़ है मस्ती से जा रहा है, दूसरा व्यक्ति अभावग्रस्त होकर, दुःखी होकर जा रहा है। एक को चीजों की परवाह नहीं है तो उसको दुःख नहीं है और दूसरे के मन में इच्छा है परंतु चीजें नहीं हैं तो वह इच्छा ही उसको पीड़ा दे रही है और वह ज्यादा दुःखी हो रहा है।

दुःख मिटाने के कई तरीके हैं लेकिन वे सब थोड़े-थोड़े समय के लिए प्रभाव दिखाते हैं और दुःख मिटाते नहीं दबाते हैं। जैसे - धन के प्रभाव से दुःख थोड़ा दबा पर फिर अहंकार आया कि 'मैं धनी हूँ, फलाने के पास नहीं है, मैंने ऐसा कर लिया...।' सत्ता के प्रभाव से दुःख दबा पर फिर बेचारे सत्तावालों को भी देखो तो क्या-क्या फजीहतियाँ हो जाती हैं ! तो अब दुःख मिटाने का सही तरीका क्या है ? भगवान कहते हैं :

यो न हृष्यति न द्वेष्टि न शोचति न कांक्षति।
शुभाशुभपरित्यागी भक्तिमान्यः स मे प्रियः ॥

'जो न कभी हर्षित होता है, न द्वेष करता है, न शोक करता है, न कामना करता है तथा जो शुभ और अशुभ सम्पूर्ण कर्मों का त्यागी है -वह भक्तियुक्त पुरुष मुझको प्रिय है।' (गीता : १२.१७)

जो अनुकूल चीजें पाकर हर्षित नहीं होता, प्रतिकूलता में शोकातुर नहीं होता, जो ऐसा मानता है कि यह सब बदलनेवाला है और मुझ आत्मा में शांत रहता है या आत्मा में सतर्क रहता है, ऐसा भक्तिमान मुझे प्रिय है। वह नब्बे प्रतिशत दुःख के सिर पर पैर रखकर परमात्मचैतन्य प्रभु में रहता है।

सामान्य आदमी के जीवन में दुःख आता है तो वह समझता है, 'मेरे पाप का फल है या फलाने ने यह करा दिया - वह करा दिया...।' कर्मवादी कर्म के अनुसार अपने को या दूसरे को कोसता है। दुःख आया तो ज्योतिषी बोलेगा : 'तुम्हारे ग्रह ठीक नहीं हैं, शनि चौथे गृह में है, राहु का प्रकोप है...।' टोने-टोटकेवाला बोलेगा :

परम पुरुषार्थ

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

मनुष्य सदैव बाहर की परिस्थितियों को दोष देते हुए जीता है : 'यदि ऐसा होता, यह अनुकूलता होती तो मैं यह कर देता, मैं वह कर देता...।' सुधारक कहते हैं कि 'यदि हमारे साथ यह सुविधा होती तो हम दुनिया को हिला देते।' सब बाहर देखते हैं, मगर अपने भीतर कोई नहीं देखता। वस्तुतः जिसका भीतर ठीक हो जाय, उसका बाहर अपने-आप ही ठीक हो जाता है। भीतर से जो अपने को अनुकूल बना लेता है, उसके लिए बाहर की सब प्रतिकूलताएँ अनुकूलताओं में बदल जाती हैं।

बाहर की परिस्थितियाँ उसे ही अनुकूल मिलती हैं, जिसने अपने भीतर की स्थिति ठीक कर ली है। जो भीतर से अपने-आपको ढूँढ़ चुका है, जिसने भीतर से अपने-आपको पा लिया है, जो भीतर से शांत है, प्रसन्न है, उसे बाहर अशांति नजर नहीं आ सकती, उसे सर्वत्र खुशियाँ ही नजर आती हैं।

हमेशा प्रसन्न रहना चाहिए लेकिन हम तुरंत कह उठते हैं : 'क्या करें जी, हम तो गृहस्थी हैं। सुबह से शाम तक हम तो अपने काम-धंधों में ही उलझे रहते हैं। हम प्रसन्न कैसे रह सकते हैं ?...'

अरे, राजा जनक भी तो गृहस्थी थे। आपको तो केवल अपने एक परिवार का ख्याल रखना पड़ता है, उनको तो सारे राज्य का प्रबंधन देखना पड़ता था। फिर भी वे प्रसन्न रहते थे कि नहीं ! और संत... संत तो सारे समाज के कल्याण को देखते हैं। संत बनना कोई सरल कार्य नहीं है ! संत समाज से जो पाते हैं वह सारा-का-सारा वे समाज की सेवा में लगा देते हैं। साथ ही जो परमात्म-अनुभव का खजाना तपस्या, गुरुसेवा करके पाया, जिसकी तुलना में त्रिलोकी का वैभव एक तिनके जितना भी नहीं है, वह भी वे समाज में खुले हाथों लुटाते हैं।

समझपूर्वक कोई गृहस्थी जिये तो वह भी साधु है, मगर नासमझी से जीता है तो वह साधु भी गृहस्थी है। समझपूर्ण (विवेकपूर्ण) व्यवहार भक्ति बन जाता है और नासमझी की भक्ति भी व्यवहार बन जाती है। लोग सोचते हैं, 'आत्म-साक्षात्कार करना तो साधुओं का काम है, हम तो गृहस्थी हैं।' अरे भाई ! साधुओं का ही नहीं है... और साधुओं का तो यह काम हो चुका है। उन्हें इतनी जरूरत नहीं है, जितनी गृहस्थी को है। फिर लोग कहते हैं : 'अभी तो मौज-शौक करने के दिन हैं, भगवान का भजन करने की अभी हमारी उम्र नहीं हुई है, बुढ़ापे में देखेंगे।' जैसे भक्ति करके भगवान पर एहसान करेंगे ! अरे, करते हो तो अपने लिए करते हो, अपना जीवन सुधरे इसलिए करते हो, कोई भगवान के लिए करते हो क्या ! भगवान की भक्ति को लोगों ने फालतू समय का उपयोग समझ लिया है। इस उलटी समझ के कारण ही तो लोग दुःखी होते हैं। और जब दुःख पड़ता है तब तो ईश्वर-चिंतन करते ही हैं, फिर पहले से ही क्यों न करें !

दुःख में सुमिरन सब करें सुख में करे न कोय।
जो सुख में सुमिरन करे
तो दुःख काहे को होय॥

'श्री योगवासिष्ठ' में वसिष्ठजी कहते हैं : 'हे रामजी ! दुःख देखना है तो संसार में जाओ। गृहस्थी लोग बेचारे बहुत दुःखी हैं। कभी किसी चिंता से

ग्रस्त हैं तो कभी किसी दुःख से। जैसे सूर्य-चन्द्र को राहु-केतु पीड़ित करते हैं, ऐसे ही संसारियों को मिथ्या सुख-दुःख पीड़ित करते रहते हैं।'

लोग समझाने पर भी अपनी नासमझी नहीं छोड़ते। राग-द्वेष, मेरा-तेरा, लोभ-मोह, क्रोध, कपट - सब अपने साथ मरते दम तक रखते हैं और भगवान की भक्ति को अपने जीवन में स्थान देना नहीं चाहते। वे सुख की इच्छा करते रहते हैं और दुःख से डरते रहते हैं। जो सुख की इच्छा करता है और दुःख से डरता है वह तो दुःख ही बनाता रहता है। जैसे ऊँट कंटकों को पाता है ऐसे वह दुःख और परेशानी ही पाता है। जो सुख की इच्छा नहीं करता व दुःख से डरता नहीं, उसे ईश्वर का आनंद मिलता है।

संसार में सारी इच्छाएँ तो कभी किसीकी भी पूरी नहीं हुईं, प्रधानमंत्री की भी पूरी नहीं होतीं। मनुष्य तो क्या देवराज इन्द्र की भी पूरी नहीं होतीं। हम कितनी ही प्रतिष्ठा हासिल कर लें, कोई-न-कोई निंदा करनेवाला बना ही रहता है। हमें लोग अच्छा ही कहते रहें, हमारी लोग प्रशंसा ही करते रहें - यह सोचना ही मूर्खता है। सदैव अनुकूलता नहीं रहती, प्रतिकूलता भी आयेगी ही। अनुकूलता में राग न रहे और प्रतिकूलता से द्वेष न रहे, इन दोनों स्थितियों में सम रहने की चेष्टा करें। जिसने दोनों स्थितियों में सम रहने की कला सीख ली उसे ईश्वर की झलक मिल जाती है, उसीने समझो जगत में बड़ा काम किया है।

जहाँ में उसने बड़ी बात कर ली,
जिसने अपने-आपसे मुलाकात कर ली।

संसार में धन कमा लेना, यश पा लेना, सत्ता या पद पा लेना, कार-बँगला आदि ठाट-बाट की चीजें इकट्ठी कर लेना बड़ी बात नहीं है, बड़ी बात है अपने को जान लेना। 'ये आने-जानेवाली सब अवस्थाएँ सपना हैं, सपने की तरह बीत जानेवाली हैं। मैं यह सब सपने की तरह देख रहा हूँ।' - यह युक्ति है ब्रह्मज्ञान की, यही रास्ता है सब दुःखों से छूटने का, जिसको संत ही जानते हैं। हजार मालाएँ घुमाओ, हजार जप-तप करो, हजार प्रकार की पूजाएँ करो परंतु यह युक्ति नहीं सीखी तो थोड़ी-सी प्रतिकूल परिस्थिति भी चित्त को विचलित कर देगी। यदि चित्त स्थिर नहीं होता तो समझो हमारी साधना आगे नहीं बढ़ी।

चित्त को स्थिर करने में सत्संग, योग और ध्यान मदद करते हैं। कई लोग वर्षों घर छोड़कर इधर-उधर भटकते हैं, मगर ज्यों ही कोई प्रतिकूल परिस्थिति आती है तो वर्षों पुराना राग-द्वेष, क्रोध आदि भड़क उठता है क्योंकि उन्होंने साधना तो की, मगर वे किन्हीं ब्रह्मनिष्ठ संत-महापुरुष का संग नहीं कर पाये होंगे।

ब्रह्मज्ञान की अटकल ब्रह्मज्ञानी संत ही बता सकते हैं। संत तो बहुत मिल जाते हैं, मगर ऐसे ब्रह्मज्ञानी संत किसी-किसी पुण्यवान, भाग्यशाली को ही मिलते हैं।

शैले शैले न माणिक्यं मौक्तिकं न गजे गजे।
साधवो न हि सर्वत्र चंदनं न वने वने॥

पर्वत बहुत हैं परंतु हर पर्वत पर माणिक्य की खानें नहीं होतीं, हर हाथी के पास मोती नहीं होते और हर वन में चंदन के पेड़ नहीं होते, ऐसे ही साधुपुरुष तो बहुत होते हैं परंतु आत्म-साक्षात्कार किया हुआ तो उनमें कोई विरला ही होता है।

ऐसे कोई ब्रह्मनिष्ठ संत मिल जायें तो दुनिया के सारे कष्ट हमें दुःख नहीं दे सकेंगे। कैसी भी परिस्थिति आयेगी, हमें विचलित नहीं कर सकेगी। संसार में कोई प्रतिकूलता, अशुभ नजर नहीं आयेगा, फिर संसार के सारे सुख फीके पड़ जायेंगे क्योंकि आत्मानंद प्राप्त हो जायेगा।

इसलिए ऐसे संत की खोज करें। उनके चरणों में बैठें। उनके मार्गदर्शन में चलें और आत्म-साक्षात्कार करके अपने जीवन को सफल बनायें - यही परम पुरुषार्थ है। ❐

निंदा-स्तुति की उपेक्षा करें

- भगवत्पाद स्वामी
श्री लीलाशाहजी महाराज

जो भी भगवत्प्राप्ति के मार्ग पर आगे बढ़ेगा, जो भी आत्म-साक्षात्कार के लिए साधना करेगा उसके मार्ग में कष्टों, विघ्नों का आना स्वाभाविक है । कोई आपका अपमान करे, निंदा करे तो इससे आप क्यों विचलित होते हैं ! आप निंदा-स्तुति को अनदेखा कर दें । अपमान या निंदा घूम-फिरकर उसीके पास पहुँच जायेगी । आप किसीके भी अपमान या निंदा के शब्दों पर ध्यान न दें । आप अपने आत्मस्वरूप का ध्यान करें ।

मीरा का कितना अपमान हुआ था । उसको मारने के लिए जहर दिया गया । संबंधियों ने उसको सताने में कोई कोरकसर नहीं छोड़ी थी । आखिर मीरा जब वहाँ से चली गयी तो वहाँ अकाल पड़ गया । ब्राह्मण व ज्योतिषियों से अकाल-निवारण का उपाय पूछा गया तो उन्होंने बताया : 'मीरा भक्त है । उसके यहाँ न रहने से अकाल पड़ा है । उसको वापस बुला लो तो अकाल दूर हो जायेगा ।'

राणा ने मीरा को बुलाने के लिए बुलावा भेजा । मीरा ने जवाब दिया : 'मैं इधर ही अपने कन्हैया की भक्ति में खुश हूँ । मुझे कहीं आना-जाना नहीं है ।' मीरा ने आने से साफ मना कर दिया तो फिर बुलावा आया । जैसे-तैसे करके मीरा को मनाया गया और वहाँ चलने के लिए राजी कर लिया । मीरा वापस लौटी तो अपमान करनेवालों ने उससे माफी माँगी । आखिर उनको मीरा की ही शरण में आना पड़ा ।

निंदा और अपमान की परवाह न करें । निर्भय रहें । प्रसन्न रहें । अपने मार्ग पर आगे बढ़ते रहें । जो डरता है उसीको दुनिया डराती है । यदि आपमें डर नहीं है, आप निर्भय हैं तो काल भी आपका बाल बाँका नहीं कर सकता । जो आत्मदेव में श्रद्धा रखकर निर्भयता से व्यवहार करता है वह सफलतापूर्वक आगे बढ़ता जाता है । उसे कोई रोक नहीं सकता । वह अपनी मंजिल तय करके ही रहता है । निर्बलता के विचारों को उखाड़ फेंको और अपने आत्मस्वरूप में विश्रांति पाओ । संत-महापुरुष की निंदा करके अथवा निंदकों की बातों में आके अपने विनाश के मार्ग पर कभी पैर न रखो और निंदा-स्तुति से प्रभावित न होओ, निंदा-स्तुति को सपना समझो । ❑

(पृष्ठ १५ से 'पिता का अपमान, टी.बी. का मेहमान' का शेष)

बोले : ''हाँ-हाँ, मैंने माफ कर दिया ।''

आप भी मरो तो जरा यह अक्ल लेकर मरना । अब मरते समय याद रहे-न रहे, अभी साल में एक बार आपस में एक-दूसरे से माफ करा लिया करो । पति-पत्नी, भाई-भाई, मित्र-मित्र लेखा चुकता करा लिया करो, जिससे दुबारा कर्मबंधन में पड़कर आना न पड़े । **गहना कर्मणो गतिः ।** कर्म की गति बड़ी गहन है ।

न धन साथ चलेगा, न सत्ता साथ चलेगी, न चालाकी साथ चलेगी; साथ चलेगा धर्म, साथ चलेगा सत्कर्म, साथ चलेगा तुम्हारा आत्मा-परमात्मा। उसकी प्रसन्नता पाने के लिए करोड़ काम छोड़कर सत्संग कर ले, गुरु की शरण ले ले । ❑

सबसे कष्टदायी ग्रह

(पूज्य बापूजी के सत्संग-प्रवचन से)

मानव-जीवन में विपत्तियाँ, मुसीबतें चाहे कितनी ही क्यों न आयें लेकिन ईश्वर की कृपा का अनुभव करके अपने हृदय को हमेशा धन्यवाद से, भगवद्‌भक्ति से भरपूर रखना चाहिए। मीरा और रबिया के जीवन में भी हजार-हजार विपत्तियाँ आयीं फिर भी उन्होंने ईश्वर की कृपा का ही अनुभव किया। भगवान श्रीकृष्ण, भगवान श्रीराम आदि अनेकों अवतारों के, संत कबीरजी, गुरु नानकजी आदि संतों एवं भक्तों के जीवन में भी दुःखद परिस्थितियाँ आयीं लेकिन वे दुःखी नहीं हुए। जैसे चलने के लिए दायाँ और बायाँ पैर जरूरी है, वैसे ही जीवन की उन्नति के लिए सुख और दुःख दोनों का होना जरूरी है। जो यह आग्रह रखता है कि सदा सुख-ही-सुख मिले वह जरूर दुःखी रहेगा। सदा सुख ठीक नहीं है क्योंकि सदा लड्डू ही खायेगा तो बीमार होगा। कभी लड्डू खाये, कभी नमकीन खाये तो कभी उपवास रखे। यह सुख-दुःख तो आता रहता है, इसीका नाम दुनिया है। तुम फरियाद मत करो। किसी परिस्थिति से चिपको मत।

'मैं परेशान हूँ, मैं दुःखी हूँ, मेरा कोई नहीं...' अरे ! तुम्हारे अंदर ऐसी अद्‌भुत शक्ति छुपी है कि तुझ चैतन्य आत्मा को कोई परेशान, दुःखी कर ही नहीं सकता। दैत्य, दानव, मानव किसी में शक्ति नहीं, भगवान में भी शक्ति नहीं तुम्हें दुःखी करने की। नाहक 'मैं मर गया, मैं मर गया...' करके परेशान हो रहे हो। बीमार शरीर होता है, परेशान मन होता है, बेवकूफी से तुम अपने को उसमें मान रहे हो। अपने साक्षी चैतन्य स्वभाव को जानो। नाहक फरियाद कर रहे हो, दुराग्रह कर रहे हो। यह दोषदर्शन और फरियादी व आग्रही स्वभाव जीवन को नष्ट कर देता है। आप ऐसा सोचो ही मत, ऐसे विचार बनाओ ही नहीं जिनसे आपके चित्त में दुःख हो, भय हो, चिंता हो। ऐसे विचारों को पैदा ही मत होने दो। अगर होते हैं तो समझो, 'ये विचार तो मन के हैं, मेरा क्या !'

दूसरी बात है कि कई भक्त कहते हैं कि 'मन लगता नहीं, मन लगता नहीं...।' वे आग्रह रखते हैं कि मन लगे। अरे ! लगे-न लगे भाड़ में जाय। नहीं लगे तो नहीं लगे। ज्यों मन लगाओगे त्यों कूदेगा। 'नहीं लगे तो नहीं लगे, जाय जहाँ जाता है। मैं प्रभु का हूँ, प्रभु मेरे हैं। ॐ आनंद... मन नहीं लगा तो क्या है ! कुत्ता मेरे कहने में चला तो ठीक है, नहीं चला तो क्या है ! मैं उसके पीछे पागल क्यों होऊँ ! जा...' ऐसा करके अपना आग्रह छोड़ दे, आ जा अपने राम में। देर कहाँ है ! वह भगवान दूर नहीं, दुर्लभ भी नहीं।

'ऐसा कर दो बापूजी ! ऐसा आशीर्वाद कर दो, ऐसा दे दो, वैसा दे दो...' यह आग्रह ठीक नहीं। सूर्य को बोले : रोशनी दे दो, चंदा को बोले : चाँदनी दे दो, गंगाजी को बोले : पानी दे दे... अरे ! तू मार गोता, पानी-ही-पानी है। तू आँखें खोल, निहार सूरज को रोशनी-ही-रोशनी है।

'मैं परेशान हूँ, मेरे को यह कर दो, मेरे को वह कर दो...' अरे ! कुछ नहीं, तू संतों के पास से आग्रहरहित जीवन जीने का ज्ञान ले ले, उनका दर्शन ले ले, मौज मार ! क्यों फिक्र करता है !

क्यों आग्रह के पीछे मरता है !

अपने जीवन में कोई आग्रह नहीं होना चाहिए। जो आग्रह है न, वह नौ ग्रहों से भी ज्यादा खतरनाक है। यह जरूरी नहीं है कि सब लोग आपके मन के अनुरूप ही जियें। कभी पति के मन के अनुसार होगा तो कभी पत्नी के। कभी बच्चे के मन के अनुसार होगा तो कभी बच्ची के। कभी नेता के मन के अनुसार होगा तो कभी जनता के।

जब व्यक्ति आग्रह रखता है कि मेरे मन के अनुसार ही हो, तभी वह दुःख पाता है। यदि उसके मन के अनुकूल कुछ होता है तो उसे सुख होता है और मन के अनुकूल नहीं होता तो दुःख होता है। सबसे खतरनाक बीमारी है - दुराग्रह, आसक्ति। 'ऐसा ही होना चाहिए, हमारे पंथ में ही होना चाहिए...।' नहीं, ज्ञानी महापुरुषों जैसा स्वाभाविक जीवन जियो। उनका कोई आग्रह नहीं होता क्योंकि वे वस्तुस्थिति को ज्यों-का-त्यों जान लेते हैं। 'सारे मत-पंथों की गहराई में जो है, वह मेरा अपना ही स्वरूप है'- ऐसा वे भलीभाँति जानते हैं। इसीलिए उन्हें न शोक होता है, न मोह होता है और न ही कोई आग्रह रहता है।

जेहि बिधि राखे राम ताहि बिधि रहिए।

दुःख कब होता है ? जब मन में वासना आती है, आग्रह होता है कि 'ऐसा ही हो... यह मिले और यह न मिले...' आग्रहरहित जीवन होने पर तो सुख-ही-सुख है। हाँ, जिज्ञासु साधक या भक्त को तो थोड़ा-बहुत आग्रह रखना पड़ता है कि 'उचित करना है, अनुचित छोड़ना है... यह करना है, यह नहीं करना है...' किंतु जब शुभ का स्वीकार और अशुभ का त्याग करते-करते विमल विवेक का उदय हो जाता है, बुद्धि सूक्ष्म और व्यापक हो जाती है तो फिर उसका सहज स्वभाव हो जाता है।

दुराग्रही तो 'बेटा मानता नहीं, बेटी मानती नहीं, बेटी की शादी नहीं होती, फलाना ऐसा नहीं...'- इस प्रकार अपने मन का क्या नहीं हुआ वह खोज-खोजके उसीकी रट लगाते-लगाते परेशान होता रहता है। ये दुःखाग्रही लोग होते हैं। दुःख बनाने की इनकी आदत होती है। हमारे मन की ऐसी दुःखाग्रही वृत्ति होती है। जैसे बत्तीस दाँत हैं, एक दाँत चला जाय तो बार-बार मन उधर ही जायेगा। अब इकतीस हैं उनकी कद्र नहीं, बस 'वह बत्तीसवाँ दाँत नहीं है !...' इसीका चिंतन। फलाने के घर में कुछ फर्नीचर देखके आये तो सोचने लगे, 'अपने पास यह नहीं है...' अरे मूर्ख ! जो है उसका तो फायदा ले, आनंद ले; जो नहीं है उसका आग्रह करके क्यों मरता है !

कमी को खोज-खोजके फरियाद करते रहना और कमी की पूर्ति करते-करते जीवन खोते रहना यही अज्ञानता है, यही भगवान से दूर जाने का रास्ता है, यही सबसे कष्टदायी ग्रह है। यह आग्रहरूपी ग्रह अपने छोड़े बिना छूटता नहीं। ❐

किसी भी भावना को साकार करने के लिए हृदय को कुरेद डाले ऐसी निश्चयात्मक बलिष्ठ वृत्ति होना आवश्यक है। अंतःकरण के गहरे-से-गहरे प्रदेश में चोट करे ऐसा प्राण भरके निश्चयबल का आवाहन करो। सीना तानकर खड़े हो जाओ अपने मन की दीन-हीन दुःखद मान्यताओं को कुचल डालने के लिए।

दत्तचित्त होकर हरेक कार्य करो। अपने स्वभाव में से आवेश को सर्वथा निर्मूल कर दो। आवेश में आकर कोई निर्णय मत लो, कोई क्रिया मत करो। सदा शांत वृत्ति धारण करने का अभ्यास करो।

(आश्रम से प्रकाशित पुस्तक 'जीवन रसायन' से)

सपने में मंत्र, जाग्रत में लाभ

६ अगस्त २००९ को मुझे पेट में बहुत तेज दर्द हुआ । डॉक्टर को दिखाया, सोनोग्राफी करायी तो पता चला कि पथरी है । मैंने करीब चार महीने एलोपैथिक, होमियोपैथिक एवं आयुर्वेदिक दवाइयाँ खायीं परंतु कोई फायदा नहीं हुआ । आखिर सब ओर से थक-हारकर २४ नवम्बर की शाम को मैं पूज्य बापूजी के श्रीविग्रह के सामने बैठकर बहुत रोया और प्रार्थना की : 'हे प्रभु ! इस बीमारी को ठीक कर दो, नहीं तो शरीर को ही ले लो ।'

रात को बापूजी ने सपने में एक मंत्र दिया और बोले : 'इसका जप करना, बिना ऑपरेशन के ही पथरी निकल जायेगी ।' मैंने खूब श्रद्धा व विश्वास से मंत्र जपना शुरू किया । लोगों के आग्रह पर ३ दिसम्बर को पुनः एक डॉक्टर को दिखाया तो उसने ७ दिन की दवा दी और कहा : ''ब्लैडर में १६ एम.एम. की पथरी है, ऑपरेशन करना ही पड़ेगा ।'' वह दवा भी असफल हुई । आखिर सब लोग बोले ऑपरेशन करा लो, पर मुझे पक्का विश्वास था कि बापूजी बोले हैं तो बिना ऑपरेशन के ही पथरी निकल जायेगी । मैंने निश्चय किया कि मैं नहीं कराऊँगा ऑपरेशन ! मैंने डॉक्टर से कहा कि ''आप पन्द्रह दिन की दवाई और दे दें ।'' डॉक्टर बोले : ''दवा से पथरी नहीं निकलेगी ।'' मैंने कहा : ''जहाँ ४ माह इंतजार किया वहाँ १५ दिन और सही ।''

दवा लेकर आ गया । १४ दिसम्बर को सुबह ५ बजे पेशाब के द्वारा वह १६ एम.एम. की पथरी निकल गयी । आज भी वह पत्थर मेरे पास रखा है । जब सपने की दीक्षा शरीर का रोग मिटा सकती है तो जागृत की दीक्षा भव-रोग से मुक्त कर दे इसमें कोई आश्चर्य नहीं है । ऐसे समर्थ सद्गुरुदेव के श्रीचरणों में मेरे करोड़ों बार प्रणाम जो हजारों किलोमीटर दूर भी अपने शिष्य की प्रार्थना पर स्वप्न में भी रक्षा कर सकते हैं ।

- जी. दण्डपाणी

मिलिंदनगर, कुर्ला (प.), मुंबई-७०.

(वर्तमान में अहमदाबाद आश्रम में समर्पित) ❑

व्रत, पर्व और त्यौहार

२४ अप्रैल : कमला एकादशी (स्मार्त)
२५ अप्रैल : कमला एकादशी (भागवत)
२८ अप्रैल : पूर्णिमा, हरिद्वार कुंभ पर्व-स्नान
३० अप्रैल : हरिद्वार कुंभ मेला समाप्त
९ मई : कामदा एकादशी (स्मार्त)
१० मई : कामदा एकादशी (भागवत)
१४ मई : अधिक मास समाप्त
१८ मई : श्रीमद् आद्य शंकराचार्य जयंती, श्री रामानुजाचार्य जयंती

अक्षय फलदायिनी : अक्षय तृतीया
(१६ मई)

अक्षय तृतीया को दिये गये दान, किये गये स्नान, जप, तप व हवन आदि शुभ कर्मों का अनंत फल मिलता है :

स्नात्वा हुत्वा च दत्त्वा च जप्त्वानन्तफलं लभेत् ।

'भविष्य पुराण' के अनुसार इस तिथि को किये गये सभी कर्मों का फल अक्षय हो जाता है, इसलिए इसका नाम 'अक्षय' पड़ा है । 'मत्स्य पुराण' के अनुसार इस तिथि का उपवास भी अक्षय फल देता है । त्रेतायुग का प्रारम्भ इसी तिथि से हुआ है । इसलिए यह समस्त पापनाशक तथा सर्वसौभाग्य-प्रदायक है । वर्ष के साढ़े तीन मुहूर्तों में भी इसकी गणना होती है ।

ग्रीष्म विशेष

(ग्रीष्म ऋतु : २० अप्रैल से २० जून तक)

ग्रीष्म में बढ़नेवाली गर्मी, रुक्षता व दुर्बलता को दूर करने के लिए कुछ सरल व अनुभूत प्रयोग :

(१) गर्मीशामक शरबत : जीरा, सौंफ, धनिया, काली द्राक्ष अथवा किशमिश व मिश्री समभाग लेके कूटकर मिला रखें। एक चम्मच मिश्रण एक ग्लास ठंडे पानी में भिगो दें। २ घंटे बाद हाथ से मसलकर, छानकर पीयें। पीते ही शीतलता, स्फूर्ति व ताजगी आयेगी।

(२) गर्मी से होनेवाली तकलीफों में : दूध में समभाग पानी मिलाकर एक चम्मच घी (हो सके तो गाय का) व मिश्री मिला दें। चुसकी लेते हुए पीयें। इससे शरीर में बल व स्निग्धता बढ़ेगी। यह प्रयोग गर्मी से भी रक्षा करता है। होनहार माँ अगर पीती है तो बालक व माँ के बल और बुद्धि में इजाफा होगा।

(३) गर्मी एवं पित्तजन्य तकलीफों में :

रात को दूध में एक चम्मच त्रिफला घृत (त्रिफला घृत आयुर्वेदिक विश्वसनीय जगह से लेना चाहिए) मिलाकर पीयें। पित्तजन्य दाह, सिरदर्द, आँखों की जलन में आराम मिलेगा।

दोपहर को चार बजे एक चम्मच गुलकंद धीरे-धीरे चूसकर खाने से भी लाभ होता है।

(४) लू से बचने हेतु : गुड़ (पुराना गुड़ मिले तो उत्तम) पानी में भिगोकर रखें। एक-दो घंटे बाद छानकर पीयें। इससे लू से रक्षा होती है।

प्याज और पुदीना मिलाकर बनायी हुई चटनी भी लू से रक्षा करती है।

(५) ग्रीष्म में शक्तिवर्धक : ठंडे पानी में जौ अथवा चने का सत्तू, मिश्री व घी मिलाकर पीयें। सम्पूर्ण ग्रीष्म में शक्ति बनी रहेगी।

(६) मुँह के छाले व आँखों की जलन में : एक चम्मच (लगभग ५ ग्राम) त्रिफला चूर्ण सुबह मिट्टी के बर्तन में पानी में भिगो दें, शाम को छानकर पीयें। शाम को उसी त्रिफला चूर्ण में पानी मिलाकर रखें, सुबह पी लें। इसी पानी से आँखें धोयें। छाले व जलन कुछ ही समय में गायब हो जायेंगे।

(७) घमौरियाँ दूर करने हेतु : १० ग्राम नीम के फूल व थोड़ी मिश्री पीसकर, पानी में मिलाके पीने से घमौरियाँ दूर हो जायेंगी।

(८) बिनजरूरी प्यास मिटाने हेतु : बार-बार प्यास लगकर बिनजरूरी पानी पीना पड़ता हो तो मिट्टी की पुरानी ईंट को धोकर साफ करके आग में डाल दें। खूब लाल होने पर गाय के दूध से बने दही से बुझा दें। यह दही थोड़ा-थोड़ा करके दिन में खा लें। अत्यधिक प्यास लगने की तकलीफ मिट जायेगी।

ग्रीष्म ऋतु में विहार : सुबह ३ से ४ शीतली व चंद्रभेदी प्राणायाम करें। ब्राह्ममुहूर्त में उठकर शीतल हवा में घूमने जायें। बगीचे की घास पर नंगे पैर घूम लें। व्यायाम व परिश्रम कम करें। सिर, आँख व कान की धूप से रक्षा करें। **ग्रीष्म में सर्वाधिक बलक्षय होता है, अतः पति-पत्नी सहवास से बचें। बल की रक्षा के लिए ब्रह्मचर्य नितांत आवश्यक है।**

पुष्टि एवं स्वास्थ्यप्रद उत्तम प्रयोग

(१) हृदय व मस्तिष्क की पुष्टि हेतु : भोजन के बीच में आँवले का ३०-३५ ग्राम रस पानी में मिलाकर २१ दिन पीने से हृदय और मस्तिष्क खूब मजबूत हो जाता है।

(२) हृष्ट-पुष्ट व गोरी संतान पाने हेतु : गर्भिणी रोज प्रातःकाल थोड़ा नारियल और मिश्री चबाके खाये तो गर्भस्थ शिशु हृष्ट-पुष्ट और गोरा होता है। (अष्टमी को नारियल खाना वर्जित है।)

(३) सुंदर व तीव्रबुद्धि संतान प्राप्त करने हेतु : गर्भिणी गर्मियों में १०० ग्राम गाय के दूध में १०० ग्राम पानी मिलाकर एक चम्मच गाय का घी मिलाके पीये तो पेट में जो शिशु बढ़ रहा है वह कोमल त्वचावाला, सुंदर, तेजस्वी व बड़ा बुद्धिमान होगा। दूध पीने के २ घंटे पहले और बाद में कुछ न खायें।

उपर्युक्त प्रयोगों के साथ यदि गर्भिणी स्त्री सत्संग की पुस्तकें पढ़ती है तो शिशु मेधावी व सुसंस्कारी होगा। ऐसे बालकों की विश्व को जरूरत है। गर्भिणी 'नारायण, शिव-शिव, नारायण-नारायण, हरि, राम-राम, हरि ॐ' आदि शब्दों का जितना अधिक स्मरण करे उतना ही शिशु होनहार होगा। ऐसे महात्माओं की आवश्यकता है।

(४) पीलिया (कामला) में : नीम के पत्तों का रस १० ग्राम, मिश्री ५ ग्राम व शहद १० ग्राम तीनों मिलाकर दिन में तीन बार लेते रहने से पित्तदोष व यकृत (लीवर) की विकृति दूर हो जाती है। इससे पीलिया में यह रामबाण औषधि का काम करता है। (पूज्य बापूजी द्वारा दिया जानेवाला आशीर्वाद मंत्र भी पीलिया में परम लाभदायी है।)

(५) पुराने बुखार में : तुलसी के ताजे पत्ते ६, काली मिर्च ४ और मिश्री १० ग्राम ये तीनों पानी के साथ पीसकर घोल बनाके बीमार व्यक्ति को पिला दें। कितना भी पुराना बुखार हो, कुछ ही दिन यह प्रयोग करने से सदा के लिए मिट जायेगा।

(६) गले में कफ जमा होने पर : जरा-सा सेंधा नमक धीरे-धीरे चूसने से लाभ होता है। सुबह कोमल सूर्यकिरणों में बैठके दायें नाक से श्वास लेकर सवा मिनट रोकें और बायें से छोड़ें। ऐसा ३-४ बार करें। इससे कफ की शिकायतें दूर होंगी।

गर्मियों में वरदानस्वरूप
हरड़ रसायन योग

लाभ : यह सरल योग ग्रीष्म ऋतु (२० अप्रैल से २० जून तक) में स्वास्थ्य-रक्षा हेतु परम लाभदायी है। यह त्रिदोषशामक व शरीर को शुद्ध करनेवाला उत्तम रसायन योग है। इसके सेवन से अजीर्ण, अम्लपित्त, संग्रहणी, उदरशूल, अफरा, कब्ज आदि पेट के विकार दूर होते हैं। छाती व पेट में संचित कफ नष्ट होता है, जिसमें श्वास, खाँसी व गले के विविध रोगों में भी लाभ होता है। इसके नियमित सेवन से बवासीर, आमवात, वातरक्त (Gout), कमरदर्द, जीर्णज्वर, किडनी (गुर्दे) के रोग, पाण्डुरोग (पीलिया, रक्त की कमी) व यकृत के विकारों में लाभ होता है। यह हृदय के लिए बलदायक व श्रमहर है।

विधि : १०० ग्राम गुड़ में थोड़ा-सा पानी मिलाकर गाढ़ी चाशनी बना लें। इसमें १०० ग्राम बड़ी हरड़ का चूर्ण मिलाकर १-१ ग्राम की गोलियाँ बना लें। प्रतिदिन १ गोली चूसकर अथवा पानी से लें। यदि शरीर मोटा है तो १ से ४ ग्राम दिन भर में चूस सकते हैं। ❐

('ऋषि प्रसाद' प्रतिनिधि)

२५ व २६ फरवरी को **नेरुल, नवी मुंबई** में भव्य सत्संग व होलिकोत्सव सम्पन्न हुआ । मुंबईवासियों को कर्म को योग बनाने की कुंजी देते हुए बापूजी बोले : ''अपने लिए नहीं सोचो, दूसरों की भलाई के लिए सोचो तो आपके लिए भी सब भलाई का सोचेंगे । हम कुटुम्ब में क्या करते हैं कि अपने भले के लिए सोचते हैं । नहीं, कुटुम्ब का भला, गाँव का भला, सबका भला सोचो । अपने भले का ज्यादा नहीं सोचो तो आपका अपने-आप भला हो जायेगा । स्वार्थ छोड़कर निःस्वार्थ हो जाओ तो भगवद्विश्रांति मिलेगी । आपका कर्म कर्मयोग बन जायेगा । भक्ति भक्तियोग बन जायेगी, ध्यान ध्यानयोग बन जायेगा ।''

२७ फरवरी से १ मार्च तक सूरत (गुज.) में हर वर्ष की तरह होलिकोत्सव का आयोजन पूज्य बापूजी के सान्निध्य में हुआ । आजकल वीभत्स रूप से मनाये जा रहे होलिकोत्सव से किनारा कर इस उत्सव को पावन, सुंदर तरीके से मनाने की रीति बापूजी ने बतायी । होली के लिए रासायनिक रंगों का इस्तेमाल त्वचारोग, आँखों के रोग आदि अनेकों रोगों को आमंत्रण देता है । अतः इन रासायनिक रंगों से बचकर पलाश के फूलों से बने प्राकृतिक रंग से खेली गयी होली तन-मन-स्वास्थ्य पर अनुकूल प्रभाव डालती है। (प्राकृतिक रंग बनाने की विधि 'ऋषि प्रसाद' के मार्च २०१० के अंक में विस्तृत रूप से दी गयी है ।)

इस अनोखे उत्सव में भक्तिगीतों पर झूम रहे थे साधकगण, बरस रहा था पलाश के फूलों का प्राकृतिक रंग और सबके हृदय में हिलोरे ले रही थीं परमात्ममाधुर्य, परमात्मरस, ईश्वरीय आनंद की लहरें। ईश्वर से अपनत्व जगाती पूज्य गुरुदेव की प्रेरक वाणी गुंजारित हुई : ''ईश्वर सर्वत्र है और जैसे माँ बच्चे का ख्याल रखती है और आप अपने अंगों का ख्याल रखते हैं ऐसे ही परमात्मा आपका ख्याल रखते हैं। बिल्कुल पक्की बात है ! आप नहीं मानो तो भी पक्की बात है और मानो तो आपका बेड़ा पार है !''

१ व २ मार्च को दिल्ली के निवासी भी रंगोत्सव का लाभ लेने से नहीं चूके । अपने सुखस्वभाव से परितृप्त होने की अनोखी कला सिखाते हुए बापूजी ने कहा : ''मित्र की सेवा करो लेकिन मित्र से सुख न चाहो, बेटे की सेवा करो पर बेटे से सुख न चाहो । सुख के दाता बनो, सुख के भिखारी न बनो तो आपका सुखस्वभाव जागृत हो जायेगा ।

जो जगत को सुख का साधन मानता है वह नास्तिक है और जो जगत में जगदीश्वर की भरपूरता देखकर जगदीश्वर के नाते व्यवहार करता है वह आस्तिक है ।''

बिहार व झारखंड निवासियों की दीर्घ प्रार्थना व इंतजार आखिर रंग लाया और बिहार व झारखंड पूज्य बापूजी के सान्निध्य में भक्ति, भगवत्प्रेम, भगवद्आनंद से झूम उठा ।

५ से ७ मार्च तक बिहार की राजधानी **पटना** में उमड़ा श्रद्धा का सागर । विशाल जनसमुदाय पूज्यश्री की अमृतवाणी व कृपामयी दृष्टि से अनुगृहीत हुआ । सहज-सुलभ शब्दों में व्यवहार व परमार्थ दोनों साधने की युक्ति

देते हुए बापूजी बोले : ''न निंदा करो न निंदा सुनो, न ईर्ष्या करो न ईर्ष्या में सहयोग दो बल्कि एक-दूसरे के प्रति सद्भाव रखो । पड़ोसी-पड़ोसी के लिए सद्भाव रखे, मनुष्य-मनुष्य के लिए सद्भाव रखे, यहाँ तक कि गाय, भैंस, बैल जो भी प्राणी हैं वे भी ज्यादा धूप में न रहें, उनको कष्ट न हो इसका ध्यान रखो । वे सर्दी में ठिठुरें नहीं, गर्मी में परेशान न हों, भूखे न मरें, प्यासे न मरें । **आत्मवत् पश्येत् सर्वभूतेषु ।** स्वयं की तरह सभीके साथ व्यवहार करो, इससे अंतरात्मा-परमात्मा प्रसन्न होता है और प्रकट होता है । वह बाहर नहीं, दूर नहीं, दुर्लभ नहीं, परे नहीं, पराया नहीं ।''

८ मार्च को पवित्र तीर्थक्षेत्र **गया** में सत्संग का सौभाग्य प्राप्त कर रहे बिहारियों को यहाँ के प्राचीन वैभवशाली इतिहास की स्मृति बापूजी ने दिलायी और कहा : ''सत्कर्म से आधिभौतिक वैभव, सद्भाव से आधिदैविक वैभव और सद्गुरु की दीक्षा एवं ध्यान-भजन से अपना आध्यात्मिक वैभव जगाकर बिहारी फिर से चमकें ।''

बोकारो स्टील प्लांट के साधकों की वर्षों की प्रार्थना स्वीकार हुई और **९ व १० (शाम) मार्च** का सत्संग **बोकारो** में हुआ । यहाँ जबसे मंदिर और सत्संगी बढ़े तबसे पहले की अपेक्षा स्टील प्लांट का नफा भी बढ़ा - २००० करोड़ तक पहुँचा । स्टील प्लांट में तत्परता से काम करनेवाले सभी साधकों को बापूजी ने शाबाशी दी और कहा : ''बेगार समझकर काम न करो । जो काम करो वह तत्परता, सावधानी से ईश्वर की प्रसन्नता के लिए करो ।''

१० (शाम) से १२ मार्च तक झारखंड की राजधानी **राँची** में यहाँ की जनता पूज्य बापूजी के सत्संग-सान्निध्य से लाभान्वित हुई । मनुष्य-शरीर की नश्वरता के प्रति सावधान करते हुए पूज्यश्री बोले : ''जो अंतवाला शरीर पाकर अनंत ईश्वर की उपासना, ईश्वर का ज्ञान, ईश्वर की दीक्षा-शिक्षा का प्रसाद नहीं पाता है, वह अपने-आपका दुश्मन है ।''

बिहार-झारखंडवासियों की तपस्या-भक्ति ने कुछ ऐसा जादू किया कि बापूजी को एक ही दिन में ३-३ जगह पहुँचना पड़ा ।

१२ मार्च को एक ही दिन **राँची व जमशेदपुर (टाटानगर)** में सत्संग कर बापूजी **भागलपुर** पहुँचे, जहाँ **१२ व १३ मार्च** को सत्संग हुआ । भागलपुर के सत्संगप्रेमियों को **'वासुदेवः सर्वमिति'** का संदेश देते हुए बापूजी ने कहा : ''बुद्धि के दोष, मन के दोष, शरीर के दोष - ये सब प्राकृतिक हैं, ऊपर-ऊपर से हैं । जैसे काई में जीव-जंतु दिखते हैं, कुछ गड़बड़ी दिखती है, काई अच्छी या मैली, रंग-बिरंगी दिखती है लेकिन मूल धातु सबका पानी है । तरंगें भिन्न-भिन्न दिखती हैं परंतु गहराई में शांत जल है, ऐसे ही ऊपर-ऊपर से भिन्न-भिन्न स्वभाव दिखते हैं परंतु अंदर से वही चैतन्य है । ऐसा चिंतन करोगे तो **'वासुदेवः सर्वमिति'** का अनुभव हो जायेगा ।''

१४ से १६ मार्च तक हरिद्वार कुंभपर्व में बापूजी की सत्संग-सुधा का लाभ देश-विदेश से आये श्रद्धालुओं को मिला । जीवन-दर्शन का मार्मिक तत्त्व समझाते हुए गुरुदेव बोले : ''दुःख तब तक है जब तक संसार से सुख की आशा है । संसार से सुख की आशा छोड़ दो तो दुःख आ ही नहीं सकता, टिक ही नहीं सकता । अतः अपने सुखस्वरूप आत्मा में विश्रांति पा लो ।''

इस बार **चेटीचंड महोत्सव** २ जगह - **अहमदाबाद** में **१६ व १७ मार्च** को तथा **इंदौर में १९ से २१ मार्च तक** आयोजित हुआ । इंदौर में ७ दिवसीय भव्य चेटीचंड महोत्सव की

पूर्णाहुति के रूप में अंत में ३ दिवसीय सत्संग का आयोजन करनेवाली चेटीचंड उत्सव समिति की इस सूझबूझ व लोक-कल्याण की सच्ची भावना को इंटरनेट आदि के द्वारा सत्संग के सजीव प्रसारण का लाभ ले रहे विश्व भर के श्रद्धालुओं ने सराहा । बापूजी ने कहा : ''देश भर में मनोरंजन-कार्यक्रम तो सब लोग करते हैं लेकिन झुलेलाल अवतरण-दिवस (चेटीचंड) केवल मनोरंजन के लिए नहीं है, व्यक्तित्व के श्रृंगार के लिए नहीं है अपितु अहं का विसर्जन करके आत्मिक श्रृंगार और परमात्म-ज्ञान का अवसर पाने के लिए है ।''

देवास के श्रद्धालुओं की ११ वर्षों की प्रार्थना फली और **२२ मार्च** को पूज्यश्री का सत्संग पाकर देवास व आसपास की जनता ने धन्यता व कृतार्थता का अनुभव किया ।

२४ से ३० मार्च तक हरिद्वार महाकुंभ में बापूजी का सान्निध्य-लाभ लेने हेतु देशवासियों का ताँता लगा रहा । महाकुंभ के पर्व-दिनों में आयोजित इन सत्संग शिविरों की कुछ विलक्षण ही महिमा दिख रही है । दिन भर में कभी ३-३, ४-४ सत्रों में पूज्यश्री का सत्संग-सान्निध्य, ध्यान, साधकों के शीघ्र उत्थान हेतु गुरुदेव द्वारा निर्देशित सचोट साधना और उसका प्रत्यक्ष सान्निध्य में प्रयोग, कभी ध्यान की घनगम्भीरता तो कभी भगवत्प्रेम की सरिता में पुलकित होते हृदय तो कभी रुदन, हास्य, भगवत्पुकार में मतवाले दीवानों की महफिल... गुरुकृपा के, भगवत्कृपा के मयखाने में क्या नशा होता है कोई यहाँ आके देखे तो सही ! पूज्य गुरुदेव का सान्निध्य-लाभ ले रहे ये महाभाग्यवान गुरु के दुलारे, इस महाकुंभ शिविर में सचमुच साधना का महाकुंभ भरते जा रहे हैं- भरते जा रहे हैं । ❐

मंत्र : पारमार्थिक क्षेत्र का टेलिफोन

मंत्र ऐसा साधन है कि हमारे भीतर सोयी हुई चेतना को वह जगा देता है, हमारी महानता को प्रकट कर देता है, हमारी सुषुप्त शक्तियों को विकसित कर देता है ।

सद्गुरु से प्राप्त मंत्र का ठीक प्रकार से, विधि व अर्थसहित, प्रेमपूर्ण हृदय से जप किया जाय तो क्या नहीं हो सकता है ! जैसे टेलिफोन के डायल पर नम्बर ठीक से घुमाया जाय तो विश्व के किसी भी देश के कोने में स्थित व्यक्ति से बातचीत हो सकती है, वैसे ही मंत्र का ठीक से जप करने से सिद्धि मिल सकती है । जब टेलिफोन के इतने छोटे-से डायल का ठीक से उपयोग करके हम विश्व के किसी भी देश के कोने में स्थित व्यक्ति के साथ संबंध जोड़ सकते हैं तो भीतर के डायल का ठीक से उपयोग करके विश्वेश्वर के साथ संबंध जोड़ लें, इसमें क्या आश्चर्य है ! विश्व का टेलिफोन तो कभी 'एंगेज' मिलता है लेकिन विश्वेश्वर का टेलिफोन कभी 'एंगेज' नहीं होता । वह सर्वत्र और सदा तत्पर है । हाँ, नम्बर घुमाने में जरा-सा हेर-फेर किया तो 'राँग नम्बर' लगेगा । घण्टी बजानी है कहाँ और बजती है कहीं और । इस प्रकार मंत्र में भी थोड़ा-सा हेर-फेर कर दें, मनमानी चला दें तो परिणाम ठीक से नहीं मिलेगा ।

आजकल धर्म का प्रचार इतना होते हुए भी मानव के जीवन में देखा जाय तो वह तसल्ली नहीं, वह संगीत नहीं, वह आनंद नहीं, जो होना चाहिए । क्या कारण है ? विश्वेश्वर से सम्पर्क करने के लिए ठीक से नम्बर जोड़ना नहीं आता । मंत्र का अर्थ नहीं समझते, अनुष्ठान की विधि नहीं जानते या जानते हुए भी लापरवाही करते हैं तो मंत्र सिद्ध नहीं होता । मंत्र जपने की विधि, मंत्र के अक्षर, मंत्र का अर्थ, मंत्रानुष्ठान की विधि हम जान लें तो हमारी योग्यता खिल उठती है । हम विश्वेश्वर के साथ एक हो सकते हैं । अरे ! 'हम स्वयं विश्वेश्वर हैं...' ऐसा साक्षात्कार कर सकते हैं । ❐

समाज के शोषित, पिछड़े, बेरोजगार तथा निराश्रित लोगों की सहायता के लिए आश्रम द्वारा संचालित एक ऐसी अनोखी योजना जो प्रदान करती है भोजन एवं दक्षिणा के साथ भजन करने का सुअवसर भी।

भजन करो, भोजन करो, दक्षिणा पाओ योजना

दोंडाईचा, जि. धुलिया (महा.)

जगन्नाथपुरी (उड़ीसा)

सागर (म.प्र.)

आमेट, जि. राजसमंद (राज.)

कपसिला, जि. बलांगीर (उड़ीसा)

प्रकाशा, जि. नंदुरबार (महा.)

उपलाई (बु.), जि. सोलापुर (महा.)

सुटकार, जि. जलगाँव (महा.)

वरला, जि. धुलिया (महा.)

विद्यार्थियों के लिए...

विद्यार्थियों के प्रेरणास्रोत पूज्य बापूजी के पावन मार्गदर्शन से देश में फैली संत श्री आसारामजी आश्रम की विभिन्न शाखाओं एवं सेवा समितियों द्वारा 'विद्यार्थी उज्ज्वल भविष्य निर्माण शिविरों' का आयोजन किया जाता है। ग्रीष्मकालीन छुट्टियों में विद्यार्थी अपने क्षेत्र में होनेवाले शिविरों का अवश्य लाभ लें।

अपने नजदीकी आश्रम/आश्रम के सत्साहित्य केन्द्र से आप ये वी.सी.डी. प्राप्त कर सकते हैं। बाल संस्कार केन्द्र शिक्षक भी इन्हें अपने केन्द्रों में अवश्य दिखायें।

अधिक जानकारी हेतु सम्पर्क करें : बाल संस्कार मुख्यालय
संत श्री आसारामजी आश्रम, अहमदाबाद। सम्पर्क : ०७९-३९८७७७४९.

दो नई वी.सी.डी.

- वीर बनो
- मातृ-पितृ पूजन